ISSN 2320-2858 UGC Journal No. 42684 जनवरी 2023

वर्ष - 11 अंक - 122

ब्रज लोक संपदा

सौजन्य : गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृन्दावन

ब्रजभाषा के अमर गायक - अष्टछाप के कीर्तनकार

वानप्रस्थ धाम वृंदावन

आओ करें ब्रजवास.....

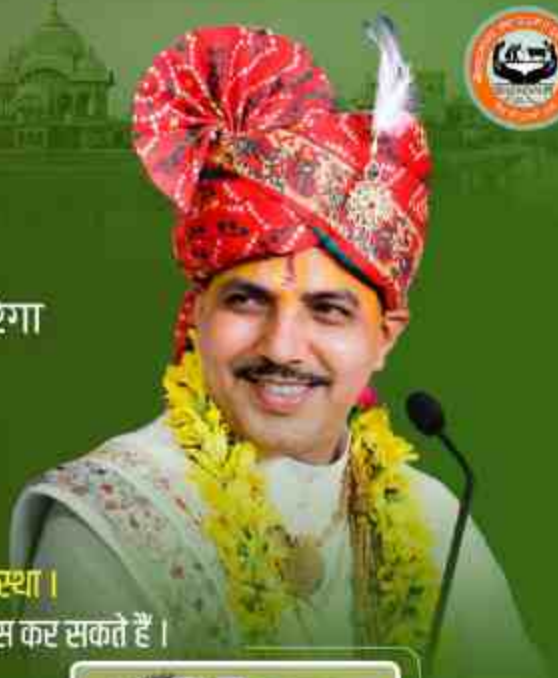

श्रीधाम वृन्दावन में वानप्रस्थ धाम सार्थक करेगा
आप के ब्रजवास की इच्छा

1. जहाँ होगा पूर्ण भक्तिमय वातावरण और होगा नित्य, योग, ध्यान, सत्संग व संकीर्तन।
2. जो बनेगा आपके बुढ़ापे का सहारा।
3. जहाँ होगी आप के आवास, भोजन, उपचार की समुचित व्यवस्था।
4. आप अपनी सुविधा अनुसार कक्ष प्राप्त कर आजीवन ब्रजवास कर सकते हैं।

यह कक्ष आजीवन आपका अपना होगा

पूज्य महाराज श्री जी
के पावन सानिध्य में चल रहीं सेवाएं

भागवताचार्य
सनातन गौरव रत्न से सम्मानित
परम पूज्य श्री चतुर नारायण पाराशर जी महाराज

श्री राधामाधव सेवा संस्थान ट्रस्ट
(गौसेवा एवं वृद्धजन सेवा को समर्पित व संकल्पित)
वानप्रस्थ धाम, श्रीधाम वृन्दावन

7088014565, 9425752959 | /CHATURNARAYANPARASHARJIMAHARAJ | WWW.CHATURNARAYANSHASTRI.COM

~O bmH gnXm

साहित्य, कला, संस्कृति, मानविकी एवं समाज विज्ञान की अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

संपादक :

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

★

सह-संपादक :

चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

★

सहयोग :

डॉ. रश्मि वर्मा

★

कला संयोजन :

ब्रज ग्राफिक्स

कार्यालय :

ब्रज लोक संपदा कार्यालय, 302, गुरुकुल रोड, वृन्दावन

मो. : 09410619265, 7017709490

Website : www.brajloksampada.com ★ E-mail : brajloksampada@gmail.com

स्वामी मुद्रक एवं प्रकाशक

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा द्वारा चौधरी प्रिंटिंग प्रेस, ब्रह्मकुण्ड, वृन्दावन, मथुरा से मुद्रित कराकर 302, गुरुकुल मार्ग, वृन्दावन (मथुरा) से प्रकाशित।

ब्रज लोक संपदा भारतीय संस्कृति के मासिक शोध-पत्र की पृष्ठभूमि में हमारा यह सद् प्रयास है कि भारत की क्षेत्रीय कला व साहित्य का प्रज्ञात कलेवर परिवेषण कर राष्ट्रीय भावात्मक एकता के सूत्र को परस्पर संस्कृति के आदान-प्रदान से पुष्ट करें; इसी से व्यक्ति का व्यक्तिवाद शिथिल होकर समन्वित भाव से लोक अस्मिता के रूप में विकासोन्मुख नव जीवन का स्वरूप ग्रहण करेगा।

आवेदन - पत्र

कृपया मैं ब्रजलोक संपदा पत्रिका का एक वर्ष का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। सदस्यता शुल्क.....नकद/चैक/ड्राफ्ट नं.....
दिनांक .....संलग्न है।

श्री/श्रीमती/.....

पिता/पति का नाम.....

जहाँ पत्रिका मंगाना चाहते हो वहाँ का पूरा पता .....

.....

पिन..... दूरभाष/मो०.....

हस्ताक्षर

(कृपया उक्त आवेदन पत्र को हाथ से लिखकर या टाईप कराकर भेज सकते हैं)

सदस्यता शुल्क

एक प्रति- 100/-, एकवर्षीय - 1100/-

विशेष: अपना चैक/ड्राफ्ट: श्रीश्री नरहरि सेवा संस्थान के नाम से
302, गुरूकुल रोड, वृन्दावन, मथुरा, उ.प्र., पिन: 281121 पर भेजें।

बैंक का नाम - केनरा बैंक
शाखा - विद्यापीठ चौराहा, वृन्दावन
खाता संख्या - 2480101002061
आईएफसी कोड - CNRBN0002480

प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
शोध पत्रिका से सम्बन्धित सभी विवाद केवल मथुरा न्यायालय के अधीन होंगे।

सम्पादकीय

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

विगत 9 जनवरी 2023 को अष्टछाप पर आधारित एक लघु गोष्ठी गीता शोध संस्थान के सभागार में सम्पन्न हुई; उसी विषय वस्तु को हम यहाँ प्रस्तुत करने जा रहे हैं।

अष्टछाप के आठों महानुभाव गोवर्धन के विविध स्थलों पर निवास करते थे। वे प्रतिदिन श्रीनाथ जी की सेवा में उपस्थित होकर अपने-अपने क्रम से कीर्तन किया करते थे। अष्ट छाप के उक्त कीर्तनकार आशु कवि, महान् संगीतज्ञ और रस सिद्ध गायक थे। आप राधा कृष्ण का झाँकियों की लीला-भावना तथा समय और ऋतु के अनुसार अपने हार्दिक भावों को तत्काल पद रूप में प्रस्तुत कर उनका सामयिक रागों में गायन करते थे।

आप सभी का अधिकांश जीवन श्रीनाथ जी की कीर्तन सेवा करते हुए गिरिराज की तलहटी में व्यतीत हुआ। वहीं आप श्रीनाथ जी के चरणों में विलीन हो गये।

अन्तर्वस्तु

1.	श्रीमद्भगवद् गीता	07
2.	पुष्टि मार्ग और अष्टछाप – *गोस्वामी पंकज बाबा*	08
3.	कुंभनदास जी – *आचार्य रास बिहारी कौशिक*	13
4.	महाकवि सूरदास – *धीरेन्द्र शास्त्री चतुर्वेदी*	18
5.	अष्टछाप के कीर्तनकार श्री परमानंददास जी – *भागवत किंकर गोपाल प्रसाद उपाध्याय*	20
6.	अष्टछाप के भक्तकवि श्रीकृष्णदास 'अधिकारी' – *डॉ. विनोद कुमार शर्मा 'दीक्षित'*	23
7.	ब्रज का गौरव बना जीएलए विश्वविद्यालय – *श्रेया शर्मा*	26
8.	श्री गोविन्द स्वामी जी – *भागवताचार्य पूर्ण प्रकाश कौशिक*	32
9.	परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदास जी – *गौरव गोस्वामी*	37
10.	श्री छीत स्वामी – *बसंत चतुर्वेदी*	41
11.	भक्त कवि नंददास – *डॉ. नटवर नागर*	44
12.	गीता शोध संस्थान में हुए कार्यक्रम (एक दृष्टि में) – *चन्द्र प्रताप सिकरवार*	48

श्रीमद्भगवद्गीता

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥

यह आत्मा किसी काल में न तो जन्मता है और न मरता है;
क्योंकि यह वस्त्र ही तो बदलता है।
न यह आत्मा होकर अन्य कुछ होने वाला है;
क्योंकि यह अजन्मा है, नित्य है, शाश्वत और पुरातन है।
शरीर के नाश होने पर भी इसका नाश नहीं होता।
आत्मा ही सत्य है, आत्मा ही पुरातन है, आत्मा ही शाश्वत और सनातन है।

(श्रीमद्भगवद्गीता : यथार्थ गीता (स्वामी श्री अड़गड़ानन्दजी) अध्याय 2-20)

पुष्टिमार्ग और अष्टछाप

गोस्वामी पंकज बाबा, गोकुल

प्राचीनकाल से संगीत का वास्तविक ध्येय आत्मकल्याण मोक्ष एवं भगवदुपासना ही है और उसको सिद्ध करने के लिये संगीत से बढ़कर कोई सरल साधन नहीं है।

पूजाकोटिगुणं स्तोत्रं स्तोत्रान्कोटि गुणो जपः।
जपात् कोटिगुणं गानं गानात् परतरं न हि॥

पूजा से स्तोत्र कोटि गुना श्रेष्ठ है, स्तोत्र से जप करोड़ गुना श्रेष्ठ है और जप से करोड़ गुना श्रेष्ठ गान है, अतः गान से बढ़कर उपासना का कोई अन्य साधन नहीं है।

श्रीमद्भागवत में भी कहा गया है–

गायन् सुभद्राणि रथांगपाणेर्जन्मानि कर्माणि च यानि लोके।
गीतानि नामानि तदर्थकानि गायत्यलज्जो विचरत्यसंगः॥

अर्थात् चक्रपाणि भगवान ने इसे लोक में जो अवतार धारण किये हैं और उनके अवतारों में किये हुए कर्म अर्थात् चरित्रों के अनुकूल नामों को सार्थक करने वाले गीतों को जो मनुष्य गान करता है वह निःसंकोच भाव से असंग होकर सर्वत्र परिभ्रमण करता है।

इससे सिद्ध है कि हमारा संगीत अतिप्राचीन, पवित्र होने के कारण अलौकिक है। हम संगीत को आध्यात्मिक और लौकिक ऐसी दो परम्पराओं में बाँट सकते हैं। एक है जीवन को पवित्र बनाकर आत्मोन्नति द्वारा मोक्ष मार्ग के प्रति ले जाने वाला आध्यात्मिक संगीत और दूसरा जीवन को भ्रष्ट बनाकर आत्मा को अधःपतन के प्रति ले जाने वाला भौतिक सांसारिक संगीत। प्राचीन काल के पश्चात् मध्य युग और आधुनिक युग में भी उपरोक्त दोनों परंपराओं का स्वरूप दृष्टि गोचर होता है। यहाँ हम भक्ति संगीत की चर्चा करने बैठे हैं।

विक्रम की 15 वीं और 16 वीं शताब्दी में संत महंत भक्तादि महानुभावों का और वंदनीय श्री वल्लभ का और बंगाल में श्री चैतन्य महाप्रभु जी, स्वामी श्री हरिदास जी तथा श्री हित हरिवंश जी का प्राकट्य हुआ। जिन्होंने नाद ब्रह्मरूप संगीत द्वारा जन समाज के हृदय में भगवान की भक्ति उत्पन्न करने हेतु आध्यात्मिक संगीत का अलौकिक स्रोत बहाया।

यह सुप्रसिद्ध हैं कि भारत वर्ष में आज तक बहती हुई संगीत सरिता का मूल सामवेद है। भारतीय संस्कृति के अंग रूप संगीत कला का उद्गम अनादि माना जाता है अतः इसका मूल चारों वेदों में से ही साम वेद कहा जाता है। इसका उपवेद गांधर्ववेद है।

वैदिक काल में सातों स्वरों का आविर्भाव हो चुका था इस तथ्य को माण्डूक्य शिक्षा की पंक्तियों का भी समर्थन प्राप्त होता है।

सप्तस्वरास्तु गीयन्ते सामभिः सामगैर्बुधै।

उपनिषद साहित्य में भी संगीत संबंधी उल्लेख प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक उपनिषदों में सामगान की पद्धति का पर्याप्त वर्णन है यज्ञ के समय ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों मिलकर वीणा बजायें ऐसा भी विधान उपलब्ध होता है–

वीणा गाथिनौ गायतः .....

ब्राह्मणोऽन्यो गायेंगे राजन्योऽन्यः ब्रह्म वै ब्राह्मणः। (तै. ब्रा. 3-9-14)

भगवान के नाम गुण और महिमा का गान करना ही कीर्तन भक्ति है। राग ताल स्वर के मिलने से और भी भावोद्भव होता है। यह कीर्तन भक्ति है।

पद्मपुराण में कहा गया है–

दृष्ट्वा प्रसन्नं महदासने हरिं ते चक्रिरे कीर्तनमग्रतस्तदा।
भवो भवान्या कमलासनस्तु तत्रागमत्कीर्तनदर्शनाय॥
प्रह्लादस्तालधारी तरलगतितया चोद्धवः कांस्यधारी।
वीणाधरी सुरर्षिः स्वरकुशलतया रागकर्तार्जुनोभूत्।
इन्द्रोवादीन्मृदंगं जयजयसुकरा कीर्तने ते कुमाराः॥

नारद भक्तिसूत्र में कहा है–

संकीत्यमानः शीघ्रमेवाविर्भवति अनुभावयति च भक्तान्॥

स्वयं भगवान का ही कथन है–

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥

पुष्टिसम्प्रदाय की गान परम्परा में मर्यादा यह है कि नियत किये हुए भक्तकवियों एवं संगीताचार्यों के ही पदों का गान प्रभु सन्मुख किया जाता है। इनमें अधिकतर सम्प्रदाय के ही अष्टछापादिक शिष्यगण हैं।

भक्तिक्षेत्र एवं संगीतक्षेत्र के मुक्त वातावरण का आरम्भ जयदेव जी के समय से होता है। भक्तिमार्गीय आचार्य युग का भी आरम्भ इसी समय से होता है। भक्तिमार्गीय चतुःसंप्रदायों के चार आचार्यों में सर्वप्रथम वैष्णवाचार्य श्रीरामानुजाचार्य का प्रदुर्भाव समय ई. स. 1017 से 1137, श्रीविष्णुस्वामी, श्रीनिम्बार्काचार्य जी तथा श्रीमध्वाचार्य जी का समय 1197 से लेकर 1276 तक का माना जाता है। मतांतर से श्रीविष्णुस्वामी को प्रथम, श्रीनिम्बार्क जी को द्वितीय, श्री रामानुजाचार्य जी को तृतीय तथा श्री मध्वाचार्य जी को चतुर्थ क्रमानुसार माना जाता है। जय देव जी का जन्म ई. स. की 11 वीं शताब्दी का उत्तरार्ध माना जाता है।

हमारे संगीत में जिस वस्तु को राग कहते हैं और राग को संगीत का प्राण समझते हैं। रागों का उद्‌गमकार भक्त जयदेव को मानना इतिहास सिद्ध है। आजकल जिस अर्थ में राग शब्द का प्रयोग किया जाता है उस रूढ़ार्थ में भरतादि के समय राग शब्द प्रचार में नहीं था। उस समय "जाति" शब्द था।

हवेली संगीत (पुष्टिभक्ति संगीत) के कवियों तथा संगीतकारों में जयदेव जी को ऐतिहासिक दृष्टि से प्रथम स्थान दिया जाता है। सम्प्रदाय में नियत ऋतु में, नियत दिन, नियत समय पर इनकी अष्टपदियां गाने की प्रणाली आज भी है। वसन्त के समय गान की जाने वाली इनकी निम्न अष्टपदी सुप्रसिद्ध हैं–

ललितलवंगलतापरिशीलन कोमल मलय समीरे।

अन्य भी श्री जयदेव रचित अष्टपदियां पुष्टिसम्प्रदाय में प्रभु सन्मुख गायी जाती हैं।

अष्टछाप से पूर्व गेय पद रचना करने वाले भक्त कवियों में विद्यापति, चंडीदास, नामदेव, भक्त नरसिंह तथा संत कबीर आदि का भी उल्लेखनीय स्थान है।

संगीत के माध्यम द्वारा श्रीकृष्ण की लीला भक्ति की विशेष साधना के उद्‌गमकर्ता महानुभाव भक्त कवि जयदेव के पश्चात विद्यापति को स्थान दिया जाता है। पुष्टि सम्प्रदाय में जिन महानुभावों के पद गाये जाते हैं उनमें ऐतिह्य दृष्टि से प्रथम जयदेव तथा दूसरा विद्यापति का नाम अंकित है। विद्यापति का समय ईसा की 14 वीं शताब्दी का माना जाता है। कवि जयदेव के समान विद्यापति भी रसिक कवि हैं। इनके पदों में प्रेममय भक्ति की उत्कृष्ट भावना के कारण भक्तिमार्गीय वैष्णव संप्रदाय में इनके पद गान को उत्कृष्ट स्थान दिया गया है। इनके पद जो पुष्टिमार्ग में गाये जाते हैं उनमें कतिपय निम्न हैं–

1. भली कीनी भोर आये मेरे अंगना। (खंडिता पद)
2. नयना माई नाहिन करत करयो। (हिलग पद)
3. नव वृंदावन नवनव तरुगन, नवनव विकसत फूल (बसन्त पद)

महाप्रभु श्रीमद् वल्लभाचार्यजी

श्रीवल्लभाचार्य जी का प्राकट्य वि. सं. 1535 में हुआ था। आपके द्वारा स्थापित मार्ग को पुष्टिमार्ग या पुष्टिसम्प्रदाय कहते हैं। पुष्टि सम्प्रदाय को विष्णुस्वामी सम्प्रदायान्तर्गत कहा जाता है। बाल्यावस्था में ही आपने वेद वेदांतादि सभी धर्म शास्त्रों में प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। वि. स. 1546 में अपने पितृचरण श्रीलक्षमणभट्ट जी के भगवद् धाम प्रयाण के बाद आपने प्रथम भारत परिक्रमा का आरम्भ किया। सं. 1546 से 1553 तक प्रथम परिक्रमा का समय माना जाता है। द्वितीय परिक्रमा का समय सं. 1554 से 1558 तथा तृतीय परिक्रमा का समय सं 1561 से 1564 तक का माना जाता है। इन यात्राओं में आप भारत भर के विविध नगरों, राज्यों में पधारें तथा अपने दार्शनिक मत शुद्धाद्वैत का स्थापन किया ।

प्रथम परिक्रमा में ही आप सं. 1550 में सर्व प्रथम व्रज में पधारे और समस्त व्रजयात्रा का निश्चय किया। प्रथम गोकुल के ठकुरानी घाट पर श्रीमद्‌भागवत का सप्ताह पारायण किया। सं. 1550 श्रावण शुक्ला 11 को भगवद् आज्ञा हुई और उसी समय से आपने अपने शिष्यों को ब्रह्मसम्बन्ध दीक्षा देना आरंभ किया। उस समय

गोवर्धन पर्वत पर एक भगवत स्वरूप का प्रादुर्भाव हुआ था। ब्रजवासी देवदमन नाम से श्रद्धा भक्ति पूर्वक उन्हें भजते थे ।

दूसरी यात्रा में आप पुन: गोवर्धन पधारे तब सं. 1556 में आपने उस स्वरूप का नाम श्रीगोवर्धननाथ जी (श्रीनाथजी) रखा। छोटा सा कच्चा मंदिर बनवाकर प्रभु को वहाँ प्रतिष्ठित किया। उस समय सदू पांडे, रामदास चौहान, कुंभनदास जी आदि आपके शिष्य हुए। सद्दू पांडे और रामदास जी को पूजास्थलों भोग सामग्री की सेवा और कुंभनदास जी को कीर्तन संगीत की सेवा में नियुक्त किया। इसी समय से पुष्टिमार्गीय भक्ति संगीत का उद्भव हुआ अत: हम सम्प्रदाय की इस भक्ति संगीत की परम्परा का उद्गम काल ई. स. 1500 (सं. 1556) मान सकते हैं। उसके प्रथम उद्गाता कुंभनदास जी हुए।

आचार्य श्री वल्लभ उच्च कोटि के संगीतज्ञ और कवि भी थे। तेलगू में रचे गये आपके कुछ पद भी प्राप्त होते हैं। किन्तु व्रजभाषा और भारतीय काव्य संगीत की उन्नति में भी आपका बहुत बड़ा योगदान है। इसीलिए श्री नाथ जी के मंदिर में संगीताचार्य कुम्भनदास, सूरदास, परमानन्ददास और कृष्णदास जैसे भक्त कविवरों द्वारा आज की द्रुपद शैली का अधिकांश उद्भव हुआ। जिसका श्रेय श्रीमद्वल्लभाचार्य जी को दिया जाएगा। उपर्युक्त चारों संगीतकार आपके ही शिष्य थे। अपने आराध्य देव श्रीनाथजी के सन्मुख संगीतमय कीर्तन की गान सेवा में आचार्य चरण ने ही उनकी नियुक्ति की थी। भक्त कवियों की ही सहस्त्रावधि द्रुपद धमारादिक की रचनाओं का आज भी संप्रदाय में गान किया जाता है। यही नहीं इस संप्रदायेतर गायकों में भी ये प्रचलित हो चुकी हैं। इन चार संगीतज्ञों ने सं. 1556 से 1577-78 तक श्रीजी के सम्मुख सैकड़ों द्रुपद धमार विविध ऋतुओं के अनुसार रागों में गान किए, यह सर्वविदित तथ्य है।

वि. सं. 1556 में संगीताचार्य कुम्भनदास, श्री वल्लभाचार्य जी की शरण में आये। पश्चात् वि. सं. 1567 में संगीताचार्य सूर और वि. सं. 1558 में समर्थ गायक कृष्णदास जी तथा वि. सं. 1577 में संगीतज्ञ परमानंद दास जी को आपने अपना शिष्य बनाया।

परमानंद दास जी की शरण में आने के पश्चात बाकी तीनों महानुभावों का ओसरा बाँध दिये जाने का उल्लेख सूरदास जी की वार्ता के प्रसंग 5 में उपलब्ध होता है-

सो इन सूरदास जी ने श्रीनाथजी की सेवा बोहोत की, सो बीच बीच में जब कुंभनदास जी परमानंद दास जी के कीर्तन के ओसरा आवते तब सूरदास जी श्री गोकुल में श्री नवनीत प्रिया जी के दर्शन कूं आवते।

श्री विट्ठलनाथ जी (श्री गुसांई जी)

पुष्टिमार्ग की स्थापना श्रीमद् वल्लभाचार्य जी के पश्चात आप श्री के द्वितीय पुत्र श्री विट्ठलनाथ जी पुष्टिमार्ग के आचार्य हुए। श्री विट्ठलनाथ जी का प्राकट्य सं. 1572 (ई.स. 1516) में पौष कृष्ण 9 को प्रयाग के निकट चरणाट में हुआ था। आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री गोपीनाथ जी के शीघ्र नित्य लीला प्रवेश के बाद आपको पुष्टिमार्ग का आचार्य पद प्राप्त हुआ। सं. 1600 (ई.स. 1544) में आप ने प्रथम ब्रज यात्रा की।

श्री गोपीनाथ जी के समय तक श्रीमद्वल्लभाचार्य जी के द्वारा निर्मित श्रीनाथजी की सेवा विधि सामान्य रूप में चलती रही। श्री विट्ठलनाथ जी ने संप्रदाय के विकासार्थ प्रभु सुखार्थ व्यापक रूप से सेवा बढ़ाने का विचार किया। आपको बाल्यकाल से ही कुम्भनदास, सूरदास, परमानंद दास जैसे महान भक्त संगीताचार्य द्वारा संगीत के राग तालादि के संस्कार प्राप्त हो चुके थे। संगीत के प्रति अत्यंत अभिरूचि के कारण संगीत के शास्त्र ग्रंथों का भी आपने अध्ययन किया था। ऐसा दृष्टिगत होता है। संप्रदाय की सेवा के मुख्य अंग राग (संगीत), भोग (सामग्री) और श्रृंगार कलाओं में सर्व प्रथम राग के उत्कृष्ट हेतु आपने अष्ट संगीताचार्यों की संख्या नियत करने का विचार किया। उस समय संगीताचार्य की कोटि के श्री वल्लभाचार्य जी के 4 सेवक तथा आपके तीन सेवक गोविंद स्वामी, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी उपस्थिति थे। अत: अष्ट की पूर्ति के लिए आपने विष्णुदास छीपा को आज्ञा दी इस प्रकार आपने श्रीजी के सन्मुख अष्ट कीर्तन कारों को नियत करके अष्ट सखा की भावना प्रकट की। संप्रदाय में एक मान्यता प्रचलित है कि सं. 1602 में अष्टछाप की स्थापना की गई परंतु नंददास जी के शरण आने के पश्चात् सं. 1607 अष्टछाप की विधिवत स्थापना होना अधिक संगत है।

राग (संगीत) उत्कर्षार्थ अष्ट सखा की मंडली बनायी गई जिनमें कुम्भनदास, सूरदास, परमानंद दास तथा कृष्णदास ये 4 संगीताचार्य पितृचरण के और गोविंदस्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुज दास तथा नंददास ये 4 स्वयं प्रभु चरण के शिष्य थे। इन्हें मिलाकर अष्टसखाओं की भावना प्रकट की और तत्कालीन राग रागिनियों में कीर्तन गान का समयानुसार नियोजन किया।

इसी प्रकार भोग (सामग्री) के क्रम में भी विभिन्न सामग्रियाँ यथा दूध, मलाई, माखन मिश्री लड्डुआ आदि विभिन्न प्रकार नित्य तथा वर्षोत्सव की सेवा में नियत किए।

श्रृंगार घराने में भी कई प्रकार के मस्तक के श्रंगार यथा पाग, फेंटा, दुमाला, मुकुट, सेहरा आदि वस्त्र के प्रकारों में पिछोड़ा, परदनी, धोती उपरना, मलकाछ आदि तथा आभूषणों में अलका वली, तिलक, कुंडल, कर्णफूल, हार, हांस पदक आदि अनेकानेक आभूषण नियत किए गए।

श्री विट्ठलनाथ जी के लीला प्रवेश के समय तक सभी अष्टछाप के कीर्तनकारों का भी तिरोधान हो चुका था। इनमें से प्रत्येक ने अपना समस्त जीवन श्रीनाथजी की एक निष्ठ भक्ति भाव पूर्वक कीर्तन सेवा करने में व्यतीत किया था। भारतीय संगीत की प्राचीन कला के द्रुपद धमार आदि प्रबंध गान की हजारों चीजों की रचना और उसकी बंदिशों से भारतीय संगीत को समृद्ध बनाने का श्रेय अष्टछाप के संस्थापक गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी एवं अष्टछाप के भक्त महा कवियों को जाता है। भारतीय संगीत के विकास में इनका योगदान अविस्मरणीय तथा स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य हैं।

★★★

श्री कुंभनदास जी
(प्रथम सखा)

आचार्य रास बिहारी कौशिक

श्री कुंभनदास जी भगवान की नित्यलीला में अर्जुनसखा हैं, एवं निकुंज में विशाखा सखी हैं। इनका प्रिय श्रृंगार कुलह का हैं। इस श्रृंगार में इनके मन की आसक्ति है। श्री कुंभनदास जी ठाकुर जी के श्री अंग में उनका हृदय हैं। अष्टयाम सेवा में श्री कुंभनदास जी का राजभोग का समय हैं। तथा अष्ट निकुंजों में आपकी पन्ना की निकुंज है और नित्यलीला में आपका वर्ण है सौदामनी। आपकी प्रिय ऋतु है ग्रीष्म, इनका मनोरथ है निकुंज लीला एवं छाक लीला।

निकुंज में इनकी सहचरी है श्री तुलसी जी।श्री हरिराय जी ने अष्टसखाओं का परिचय देते हुए कहा है- जो भगवान की नित्यलीला के अष्टसखा है वही अष्टछाप के रूप में प्रगट हुए हैं। जब श्री महाप्रभु जी का प्राकट्य हुआ,श्री श्रीनाथजी गिरिकंदरा से प्रगट हुए तब समस्त लीला परिकर भी भूतल पर प्रकट हुआ।

श्री द्वारकेशलाल जी कहते हैं-

अष्टछाप आठों सखा, श्री द्वारकेश परमान।
जिनके कृत गुनगान करि निजजन होत सुखान॥
सूरदास सों कृष्ण तोक परमानन्द जानों,
कृष्णदास सों ऋषभ छीतस्वामी सुबल बखानो॥
अर्जुन कुंभनदास चतुर्भुजदास विसाला,
विष्णुदास सों भोज, स्वामी गोविन्द श्री दामा॥

श्री द्वारिकालाल जी कहते हैं जब नन्ददास जी अष्टछाप में सम्मिलित नहीं हुए थे तब विष्णुदास जी थे। जब वे बहुत वयोवृद्ध हुए तब उनके स्थान पर श्री नन्ददास जी को स्थान दिया। ये अष्टछाप के भक्त सखा भाव से भगवान की सख्य रसलीला का अनुभव करते हैं और सखी भाव से भगवान की निकुंज लीला का अनुभव करते है।

अष्टछाप में श्री कुंभनदास जी ही महाप्रभु जी के सेवक हुए। श्री निकुंजनायक भगवान श्री गोवर्धननाथ जी गिरिकंदरा से प्रकट हुए और श्री महाप्रभु जी भी उसी समय कलिकाल के प्रारंभ में प्रकट हुए। तब श्री विसाखा सखी श्री श्रीनाथजी की सेवा में श्री कुंभनदास जी के रूप में एवं दूसरे श्री महाप्रभुजी की सेवा में कृष्णदास जी के रूप में एवं दूसरे श्री महाप्रभु जी की सेवा में कृष्णदास मेघन के रूप में प्रगट हुए।

श्री कुंभनदास जी गोवर्धन के निकट जमुनावता गाँव में प्रगट हुए। आपके बारे में श्री नाभादास जी लिखते है-

राधामाधव बिना कोउ पद जिन कबहु न गायो।
विरह रीत हरि प्रीत पंथ करि प्रगट दिखाओ।
सुनत कृष्ण कौ नाम श्रवन हियरो भर आवत,
प्रेम मगन नित नव पद रच हरी सनमुख गावत।
श्री बल्लभपदगुरू जुग पदम प्रगट सरस मकरंद जनु,
श्री कुंभनदास कृपाल अति मूरति धोर प्रेम जनु॥

आपसे एक क्षण भी श्री ठाकुर जी का विरह सहन नहीं होता है ऐसा विप्रयोग हो जाता था। प्रेम लक्षणा भक्ति का क्या स्वरूप है? यह जगत को प्रकट करके दिखाया।

मानो साक्षात् प्रेम ही श्री कुंभनदास जी के रूप में प्रकट हुआ है। साक्षात प्रेम ही भगवदीय श्रीकुंभनदास जी के रूप में मूर्तिमान है। भावसंग्रह नामक ग्रंथ के अनुसार श्री कुंभनदास जी के पिता का नाम श्री भगवानदास था। श्री भगवानदास जी के भाई थे, धर्मदास जो श्री कुंभनदास जी के काका थे। श्री कुंभनदास जी के प्राकट्य के 10 वर्ष बाद श्री श्रीनाथजी श्री गिरिराज से प्रगट हुए। श्रीश्रीनाथ जी का प्राकट्य सं. 1535 में हुआ। अर्थात् उस समय आप 10 वर्ष के होने के कारण यह सिद्ध होता है कि आपका जन्म सं. 1525 में हुआ।

सं. 1525 में कार्तिक कृष्ण एकादशी को आपका जन्म जमुनावता गाँव में हुआ। आपके जन्म के बारे में एक किवदन्ती है कि आपके पिता श्री भगवानदास जी को कोई सन्तान नहीं थी और आपके माता-पिता कुंभ स्नान के लिए प्रयागराज पधारे तो वहाँ किसी संत के द्वारा उन्हें पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। जब आपका जन्म हुआ तो आपके पिताजी ने आपका नाम श्री कुंभनदास रखा।

आपकी बाल अवस्था में ही आपके पिता का देहावसान हो गया और आपका पालन-पोषण आपके काका श्री धर्मदास जी करने लगे। आपके काका श्री धर्मदास जी के यहाँ 200-400 गाय थी। एक दिन एक गाय जो श्री नंदबाबा के खिरक वंश की थी वह श्री गिरिराज जी की तलहटी से चरकर नहीं लौटी तो आपके काका आपको साथ लेकर श्री गिरिराज जी के ऊपर गाय को खोजने गये। तब देखा कि वह गाय श्री ऊर्ध्व भुजा के प्राकट्य के समीप एक बड़ी सिला पर बैठी है, श्री धर्मदास जी उस गाय को घर लाने का प्रयत्न करने लगे। किन्तु उस गाय ने वहाँ से एक कदम भी आगे नहीं बढ़ाया। तब श्री नाथजी ने साक्षात् आज्ञा करी- अरे! धर्मदास तू जा गाय कूँ सद्दू पाण्डे के खिरक में कर दे याको मैं दूध आरोगेंगो! यह महत् कुल की गाय है। और श्री कुंभनदास

जी से आज्ञा करी- अरे! कुंभनदास तू नित्य मेरे पास खेलवे कों आयो करि श्रीश्रीनाथजी की आज्ञा से श्री धर्मदास जी ने वह गाय सद्दू पाण्डे जी के खिरक में कर दीनी और तबही से श्री कुंभनदास जी श्री श्रीनाथ जी के संग खेलवे जाते थे।

आपका विवाह बहुलावन (बाटी) गाँव की एक कन्या से विवाह हुआ। वह स्त्री साधारण थी। किन्तु भगवदीय का संग कभी निष्फल नहीं जाता है। अत: श्री कुंभनदास जी के साथ आपको भी श्री महाप्रभु वल्लभाचार्यजी की सेवक एवं भगवदीय चतुर्भुजदास जी का माता होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जब आचार्य चरण श्री महाप्रभु जी ब्रज में पधारी और आपने उनके बारे में समाचार सुना तो आप अपनी पत्नी के साथ दर्शन के लिए आन्यौर पधारे। आप दोनों पति-पत्नी जब महाप्रभु जी के समीप दंडवत् प्रणाम कर बैठे। तब श्री आचार्य चरण ने पूछा- जो कुंभनदास ! आये ? तब आपने विनती करी- जी महाराज! बहोत दिन तें भटकत हतो; सो आप मो पर कृपा करौ। श्री कुंभनदास जी दैवी जीव हैं, यह जानकर आचार्य चरण ने आज्ञा करी- जो तुम स्त्री-पुरूष दोऊ जने न्हाय आवो। तब आप दोनों संकर्षण कुंड में न्हाय के श्री आचार्य जी के पास आये। तब आचार्य जी ने आपको नाम सुनाया (अष्टाक्षर प्रदान किया)। तब आपकी पत्नी ने विनती करी - जो महाराज आपु बड़े है, मेरे बेटा नाहीं है। तासों आप कृपा करिकें देऊ। तब आचार्य जी ने प्रसन्न होकर कहा- तेरे सात बेटा होयगें, तू चिंता मत करे। तब आपकी पत्नी बहुत प्रसन्न हुई। पर श्री कुंभनदास जी ने कहा कि तैने यह कहा माँगों। अरे! आचार्य जी से तो ठाकुर जी माँगती वह कृपा करके ठाकुर जी देते। भगवदीय कभी लौकिक कामना नहीं करते हैं। प्रात:काल श्री आचार्य चरण ने श्री गोवर्धन नाथ जी को जगाने के बाद श्री कुंभनदास जी को आज्ञा करी कि- जो कुछ भगवल्लीला वर्णन करो! तब श्री कुंभनदास जी ने श्री गोवर्धन दास जी को दण्डवत प्रणाम करके पहला पद सुनाया-

साँझ के साँचे बोल तिहारे।
रजनी अनत जगे नंदनंदन आये निपट सँवारे॥
आतुर भये नीलपट ओढ़े पीयरे बसन बिसारे।
कुंभनदास प्रभु गोवर्धनधर भले वचन प्रतिकारे॥2॥

आपके मुख से यह कीर्तन सुन कर श्री आचार्य चरण बहुत प्रसन्न हुए और कहा- जो कुंभनदास! निकुंज-लीला संमंधी रस को अनुभव भयो ? तब आपने महाप्रभु जी को दण्डवत् करके विनती करी कि महाराज आपकी कृपा सौं। तब आचार्य महाप्रभुजी ने कही- जो तिहारे बड़े भाग्य हैं। जो - प्रथम प्रभु तुमकों प्रमेय बल कौ अनुभव बताये तासौं तुम सदा हरि रस में मगन रहोगे। तब आपने विनती करी कि- जो महाराज! मोकों तो सर्वोपरि याही रस को अनुभव कृपा करिके दीजिए। अत: श्री कुंभनदास जी ने सभी कीर्तन युगल लीला संबंधी गाये हैं।

श्री कुंभनदास जी नित्य प्रात:काल ही जमुमावता से श्री गिरिराज जी के ऊपर श्री गोवर्धननाथ जी के दर्शन के लिए आते और समय-समय के कीर्तन गाते। श्री गोवर्धन दास जी आपको सहानुभावता दिलाते और

नित्य खेलते। कुछ दिन बाद एक मलेच्छ उपद्रव करता हुआ ब्रज की ओर आया। जब वह श्री गिरिराज जी से मात्र पाँच कोस दूर था, तब श्री सद्दू पाण्डे श्री मणिचन्द्र पाण्डे श्री रामदासजी श्री कुंभनदास जी इन चारों वैष्णवन ने विचार किया कि यह मलेच्छ भगवद् धर्म द्वेषी है। कुछ विचार करना चाहिए। ये सभी वैष्णव श्री श्री नाथ जी के अन्तरंग थे, अत: श्री गोवर्धननाथ जी साक्षात् बातें करते। तब इन चारों वैष्णवन ने श्री श्री नाथ जी से पूछा– जी महाराज! तब कैसी करें? जो धर्म कौ द्वेषी मलेच्छ लूटत आवत है। तासों आपु कृपा करिकें आज्ञा करिए। तब श्री गोवर्धन नाथ जी ने आज्ञा करी– जो हमकों तुम टोंड़ के घने में पधराय के चलौ। हमारौ मन वहाँ पधारिवे को है। तब चारों वैष्णवन ने प्रार्थना करी– जो महाराज असवारी कहा चहिये? तब श्री गोवर्धन नाथ जी ने कहा– जो सद्दू पाण्डे के घर भैंसा है, सोई ले आवौ, तापै चढ़िके चलूंगो। और फिर उस भैंसा के ऊपर विराजकर श्री गोवर्धननाथ जी टोंड़ के घने में पधारे। चारों वैष्णव यत्न पूर्वक श्री गोवर्धन नाथ जी को सुखपूर्वक लेकर रास्ते में जब चले, तो काँटे और गोखरूओं से चारों को बहुत कष्ट सहन करना पड़ा। भगवदीय अपनी देहादि के कष्ट को कभी भी कष्ट नहीं मानते हैं। उनका तो सर्वस्व श्री ठाकुर के सुखार्थ ही सब जीवन रहता है। अत: आप सबने भगवद् लीला समझ कर बहुत विचार नहीं किया। टोंड़ के घने के बीच ठाकुर जी की निकुंज है। एक नदी प्रवाहित है उस समय श्री यमुनाजी की एक धार टोंड़ के घने के बीच होकर श्यामघाट पहुँचती थी जिसका प्रमाण इस पद में मिलता है–

श्याम ढ़ाक तर छाक आरोगत !
लेकर थारी ठाढ़ी है ललिता, भोजन व्यंजन केले के पातने, चहुँधा चपलता-सी ब्रज वनिता।
निरखत अंबुज मोहन को मुख लोचन भये मानो मृग के से चकता।
श्री बिठ्ठल गिरधर आरोगत, निकट बहत कालिन्दी सरिता॥

टोड़ के घने के भीतर एक चबूतरा है, एवं एक छोटा सा सरोवर है, वहीं उस चबूतरा पर श्री गोवर्धन नाथ को विराजमान किया गया है। श्री श्री नाथ जी श्री रामदास जी आज्ञा करी– कुछ भोग धरो, सो दो सेर चून कौ सीरा, श्री रामदास जी सिद्ध करके ले गये, आपने पधराया, तब भोग धराया। तब निकुंज से श्री स्वामिनी जी पधारीं। सभी वैष्णव श्री गोवर्धननाथ जी की आज्ञा से लताओं की ओट में बैठ गये। तब श्री गोवर्धन नाथ जी कुंभनदास जी को आज्ञा करी– जो कुंभनदास तू कछु या समय कीर्तन गावै तौ मन प्रसन्न होय। और मैं सामग्री आरोगूँ। तब श्री कुंभनदास जी ने विचार किया कि प्रभू के मन में कुछ हास्य प्रसंग सुनने का विचार है। श्री कुंभनदास जी ने गाया–

भावत है तोहि टोंड़ कौ धनौं।
कांटा लागे गोखरू लागे फाट्यो जात यह तनो॥1॥
सिंहे कहा लोकरी कौ डर यह कहा बानिक बन्यो।
'कुंभनदास' तुम गोवर्धनधर वह कौन रांड़ ढ़ेढ़नी कौ जन्यौ॥2॥

यह सुनकर श्री गोवर्धननाथ जी बहुत प्रसन्न भये।

एक किसी कलाकार ने श्री कुंभनदास जी का पद सीख कर अकबर को सुनाया। उस पद को सुनकर अकबर को कुंभनदास जी से मिलने की इच्छा प्रकट हुई। कुछ सैनिकों को भेज कर उसने श्री कुंभनदास जी को फतेहपुर सीकरी बुलवाया । श्री कुंभनदास जी जब अकबर के दरवार में पहुंचे तो अकबर बादशाह ने कहा बाबा साहब बैठिए सुनकर सिंहासन पर बैठ कर भी श्री कुंभनदास जी विचार करने लगे कि जीते हुए कहां नरक में बैठ्यो हूँ जाते अच्छे तो हमारे ब्रज के रूख ही हैं। अकबर ने कहा बाबा आपने विष्णुपद बहुत गाये हैं, सो कछु सुनाओ। श्री कुंभनदास जी ने विचार किया इस मलेच्छ के सामने श्री ठाकुर जी के पद सुनाने ठीक नहीं है अत: कुछ ऐसा पद सुनाऊँ जो याको बुरौ लगे और फिर यह मुझे कभी नहीं बुलाए। जो भगवान की शरणागति प्राप्त करे वह संसार से निर्भीक हो जाता है अत: श्री कुंभनदास जी ने यह पद सुनाया–

भक्तन को कहा सीकरी काम।
आवत-जात पन्हैया टूटी बिसर गयो हरि नाम॥1॥
जाको मुख देखे दु:ख उपजे ताकों करनो पर्‌यो परनाम।
'कुंभनदास' लाल गिरधर बिनु यह सब झूँठों धाम॥2॥

पद सुन कर बादशाह ने विचार किया कि यह भक्त है इन्हें मुझसे कुछ प्राप्त करने की चाह नहीं है। इसलिए ये मेरा गुणगान नहीं करेंगें। अत: श्री कुंभनदास जी से पूछा– बाबा मांगों कुछ आज्ञा फरमाओ सो मैं करूँ। तब श्री कुंभनदास जी ने कहा आज के बाद गुझे बुलैयो मति।

ऐसे परम भगवदीय श्री कुंभनदास जी की वार्ता कहाँ तक कहैं ?

★★★

महाकवि सूरदास

(द्वितीय सखा)

धीरेन्द्र शास्त्री चतुर्वेदी

पुष्टिमार्ग के जहाज एवं भक्तिकाल के साहित्य गनन में साक्षात् सूर्य की भांति अद्यावधि सम्प्रकाशित श्रीसूरदास जी की अष्टछाप के भक्त-कवियों में अति-विशिष्ट महिमा है। सूर्य का एक नाम 'सूर' भी है; इस दृष्टि से, जैसे सूर्य के उदय होने पर तमस् का नाश होकर मार्ग प्रकाशित होता है; वैसे ही सूरदास जी की अद्‌भुत वाणी और उनका दिव्य-चरित्र भक्ति पथ के पथिकों के अन्त:करण की भ्रान्ति मिटाकर भगवल्लीला का दिव्य-प्रकाश प्रदान करता है। साथ ही साथ साहित्य और संगीत के प्रेमियों को रस-छन्द-अलङ्कारों की दिव्य छटा के साथ अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव कराता है।

सूरदास जी के जन्म समय और जन्मस्थान के विषय में एक निश्चित मत प्राप्त नहीं होता। यही बात उनके जीवन-चरित्र के विषय में भी है। कुछ इतिहासकार उनका जन्म 1478 ईस्वी बताते हैं और जन्मस्थान आगरा के पास 'रुनकता' ग्राम। कुछ विद्वान 1540 ईस्वी में उनका जन्म स्वीकार करते हैं, वहीं पुष्टिमार्गीय मान्यता ऐसी भी है कि श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु जी एवं श्रीसूरदास जी के जन्म में केवल 10 दिन का अन्तर है तथा उनका जन्मस्थान सीही ग्राम है। अब चूंकि श्रीवल्लभाचार्यजी का जन्म दिवस संवत् 1535 वैशाख कृष्ण एकादशी को स्वीकार किया गया है, अत: पुष्टि सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार सूरदास जी का जन्म वैशाख शुक्ला पंचमी संवत् 1535 स्वीकार किया गया है। अन्य साहित्यकारों श्रीरामचन्द्र शुक्ल तथा अन्यों ने इससे भी अलग जन्मकाल निर्धारित किया है।

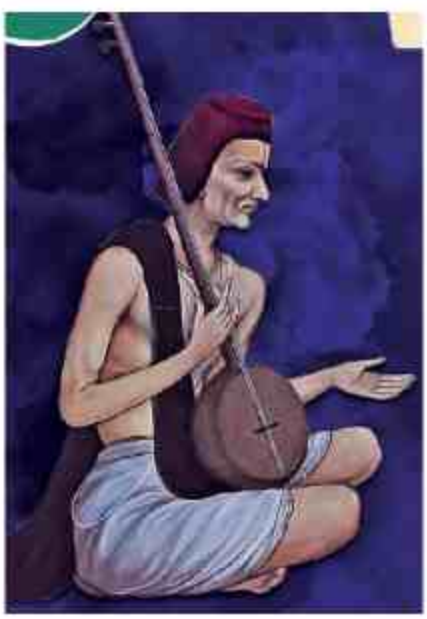

जीवन चरित्र के विषय में एक आधुनिक मतानुसार सूरदास जी 'जन्मान्ध' नहीं थे। बाद में उन्होंने अपने नेत्र स्वयं फोड़े- यह जानने को मिलता है। बाकी अन्य मतों में लगभग वे 'जन्मान्ध' ही स्वीकार किये गये है। जन्मान्ध न मानने का कारण आधुनिक विद्वान यह बताते है कि सूरदास जी के पदों में श्रीकृष्ण के शृङ्गार तथा लीलाओं का जो इतना सजीव और आकर्षक वर्णन है, वह कोई जन्मान्ध नहीं कर सकता। पुष्टि जगत में यह शास्त्रीय मान्यता स्वीकारी गयी है कि प्रभु भक्ति और गुरुभक्ति जिस हृदय में दृढ़ हो गयी है उसे सब कुछ सुस्पष्ट और निर्बाध स्फुरित हो सकता है- भौतिक साधन और माध्यम के अभाव में भी-

"यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्था: प्रकाशन्ते महात्मन: ॥"

और सूरदास जी के जीवन में ईश-कृपा और आचार्य कृपा का ऐसा अद्भुत संगम प्रकट हुआ कि उन्होंने गुरु और ईश्वर को पृथक देखा ही नहीं। यह भावना उनके सर्वप्रचलित पद में 'सूर कहा कहि द्विविध आँधरौ'- इस पंक्ति से अभिव्यक्त होती है। अस्तु!

इसके अलावा इनके नाम के विषय में भी ऐकमत्य नहीं है। सूरदास जी के पदों में -'सूर'-'सूरदास'-'सूरजदास' - 'सूरश्याम' - 'सूरदास-मदनमोहन' - ये सभी छाप प्राप्त होती हैं। सूर-कृत साहित्य-लहरी के पदों में 'सूरजचन्द' भी लिखा मिलता है। अत: मान्यता वैविध्य इस संदर्भ में भी है। इस सब का कारण यह है कि जैसे संस्कृत भाषा के प्राचीन साहित्यकार, शास्त्रों की मधुर गंभीर वीथियों में भ्रमण करते-करते स्वयं को भूल जाने के कारण अपने स्वयं के बारे में कभी स्पष्ट निर्देश करते हुए नहीं दिखते; अत: उनके भी व्यक्तिगत-इतिहासों में मान्यता वैविध्य पाया जाता है- वही स्थिति इन भक्त कवियों की भी है। ये भी प्रिया-प्रियतम की अनन्त लीलाओं में रमे रहने के कारण स्वयं को भी विस्मृत कर तदेकनिष्ठ अथवा तन्मय हो गये हैं। सूरदास जी ने स्वयं यह बात स्वीकारी है-

"नाहिन रह्यौ हिय में ठौर।
नन्द-नन्दन अछत कैसे आनियै उर और"

साहित्यिक दृष्टि से सूरदास जी वात्सल्य और शृङ्गार दोनों ही रसों के सिद्ध काव्यकार हैं। वात्सलय में जहाँ' सोभित कर नवनीत लिये'.... 'मैया मोरी मैं नहि माखन खायौ'... जैसी सैकड़ों उत्कृष्ट भावनायें परब्रह्म के सरलीकरण और रसशास्त्रीय दृष्टि से साधारणीकरण को समझाती है, वही शृङ्गार में-

"मानौ भई अन्तर धनदामिनि।
धन दामिनि, दामिनि धन अन्तर, सोभित हरि व्रज भामिनि"

जैसे सहस्रों पद्यावली रसमार्गीय प्रमेयों को समझने में पर्याप्त है। शृंङ्गार में भी उत्तर कलात्मक विप्रलम्भ का साङ्गोपाङ्ग परिचय सूरदास जी के भ्रमरगीत से पाया जा सकता है। विद्वानों को भ्रमित और आश्चर्यचकित करने को सूर की कूट-पद्यावली ही पर्याप्त हैं।

श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु एवं श्री विट्ठलेश में अनन्य निष्ठा तथा पुष्टि सिद्धान्त के सर्व-संग्रह को अन्तर में समेटकर सूरदास जी ने जो वाणी प्रकट की है- वह सहृदयों को अनन्तकाल तक रससिक्त करती रहेगी।

" कवि अनेक बानी विमल, करत विविध विधि गान।
सूर पुञ्ज रस-रश्मि कौ, प्रकट पुष्टि जल जान॥
प्रकट पुष्टि जलगान समर्पित श्री वल्लभ पग,
कविता रस की खान, रसिक सर्वस्व भई जग।
वत्सल अरु शृङ्गार निरूपन अति अनुपम छवि,
हरिलीला कौं निरखि गान कीन्हों अद्भुत कवि॥"

★★★

अष्टछाप के कीर्तनकार श्री परमानंददास जी

(तृतीय सखा)

भागवत किंकर गोपाल प्रसाद उपाध्याय

भक्तिकाल का समय विसंगतियों से भरा हुआ तो था ही पर चतुसम्प्रदायाचार्य एवं भक्ति कालीन कवियों के जन्म से इसी कालक्रम में भगवद उपासना एवं साहित्य का उन्नयन हुआ। सभी ने अपने-अपने ढंग से साहित्य एवं उपासना को शिखर तक ले जाने का कार्य सम्पादन किया। इसी क्रम में पूज्य चरण श्री विठ्ठलनाथ जी (गोसाई जी) ने अष्ट छाप की संरचना कर साहित्य एवं अध्यात्म जगत पर बहुत बड़ा उपकार किया। इसमें सूरदास जी, कुंभनदास जी, परमानंद दास जी, कृष्णदास जी, (श्री बल्लभाचार्य जी के शिष्य थे) छीतस्वामी जी, गोविन्द स्वामी जी, चतुर्भुजदास जी एवं नन्ददास जी अष्टछाप में (श्री विठ्ठलनाथ जी के शिष्य थे) सम्मिलित किया। अष्टछाप ने भक्ति एवं साहित्य की अजस्र धारा को प्रवाहित किया। इसी कम में हम इस लेख के माध्यम से श्री परमानन्द दास जी के कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर विचार करेंगे।

भक्ति काल में रचनाकारों को अपनी प्रंशसा की इच्छा नहीं रहती थी सो अपने विषय में उनके अपने द्वारा कुछ लिखा कम ही मिलता है सो उनका जन्म तिथि एवं जन्म संबत निकालना कठिन हो जाता है इसी तरह श्री परमानन्द दास जी के जन्म संवत् के विषय में अनुमान ही लगाना पड़ता है। चौरासी वैष्णवन की वार्ता के भाव प्रकाश के अनुसार श्री परमानन्द दास जी ने महाप्रभु श्री बल्लभाचार्य जी से अड़ैल में दीक्षा ली। यदुनाथ दिग्बिजय (पत्र 52) में लिखा है- श्री बल्लभाचार्य जी ने श्री विठ्ठलनाथ जी (गुसाई जी) जन्म से 1572 के बाद जब हरिद्वार की यात्रा की तब वहाँ से अड़ैल प्रयाग के निकट निवास किया । उसी समय कविराज भट्ट एवं श्री परमानन्द दास जी के शरण लिया।

कॉकरौली के इतिहास पत्र 74 के अनुसार हरिद्वार की यात्रा का समय बैठक चरित्र के आधार पर 1576 दिया गया है। अत: निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि 1576 के बाद 1577 में परमानन्द जी शरण आये।

वार्ता साहित्य में पूज्य श्री हरिराय जी कृत भाव प्रकाश का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि शरण गति के समय श्री परमानन्द दास जी उम्र 27 वर्ष थी। 1577 में वे 27 कम करने पर परमानन्द दास जी का जन्म संवत 1550 सिद्ध होता है। बल्लभ सम्प्रदाय में प्रचलित वार्ता के अनुसार आपकी जन्मतिथि मार्गशीर्ष सप्तमी है।

आपके जन्म होते ही राजा ने आपके पिता को प्रचुर धन दिया था। इससे उनके हृदय में परमानंद जी की अनुभूति हुई। इसी से नवजात शिशु का नाम भी परमानन्द रख दिया। इनके माता पिता का नामल्लेख नही मिलता है पर वार्ता भाव प्रकाश के अनुसार आपके माता पिता कान्य कुब्ज ब्राह्मण थे कन्नौज में रहा करते थे।

इनके पिता ने समयानुसार ही इनका यज्ञोपवीत संस्कार कराया। इन्हें साहित्य एवं संगीत की अच्छी शिक्षा दिलाई। परमानन्द दास जी श्रेष्ठ व योग्य कवि थे। अपनी पौगण्डावस्था से ही काव्य रचना किया करते थे। स्वरचित पदों को अच्छी तरह संगीत में निबद्ध कर गाया करते थे। गुणीजन साथ रहा करते थे वार्तानुसार इनके पिता धनोपार्जन हेतु दक्षिण में चले गये। उनके बाद इन ने अपनी समाज कर ली, पद गायन के माध्यम से स्वल्प काव्य में ही अच्छी ख्याती अर्जित कर ली।

एक बार अपने साथियों के साथ आपने प्रयाग यात्रा की। वहीं रहने लगे, पद गाया करते। अड़ैल में महाप्रभु बल्लभाचार्य जी विराज रहे थे। परमानन्द दास जी प्रयाग में कीर्तन का प्रचार कर रहे थे आपकी ख्याति की सब जगह चर्चा होती थी एक बार किसी ने श्री बल्लभाचार्य चरण से आपकी प्रंशसा की तब आचार्य चरण ने कहा दैवीय जीव है प्रशंसा होनी ही चाहिए। आचार्य चरण की सेवा में गुजरात के कपूर क्षत्रिय जन्म धरिया थे। वह संगीत के रसिक थे। उनके मन में परमानन्द दास जी का कीर्तन सुनने की इच्छा हुई एक बार समय मिला तो रात्रि में सेवा उपरान्त कपूर क्षत्रिय अड़ैल से प्रयाग यमुना पार कर कीर्तन सुनने आये। पूरी रात्रि कीर्तन सुन सायं यमुना पार अड़ैल पहुंचे। यहीं परमानन्द दास जी थोड़ी देर विश्राम करने लगे तो स्वप्न में श्री नवनीत प्रिय जी ने कहा हम बल्लभाचार्य जी के साथ अड़ैल आये हुए हैं हम आचार्य जी के सेवक कपूर क्षत्रीय के साथ आज आये और आपका कीर्तन सुना बहुत आनंद आया प्रभू का दर्शन एवं आचार्य चरण के दर्शन की हृदय में बहुत उतावली हुई प्रात: जब अड़ैल पहुंचे तो आचार्य जी के दर्शन हुए आचार्य जी ने कोई भगवतलीला का पद गाकर सुनाने की आज्ञा दी तो आपने विरह का पद सुनाया। तभी आचार्य जी ने आपको शरण लिया अड़ैल में रहकर ही आपने सम्प्रदाय का ज्ञान प्राप्त किया आचार्य चरण जब ब्रज आने लगे तब श्री परमानन्द दास जी ने भी ब्रज यात्रा की इच्छा प्रगट की और पद गाया।

यह माँगौं गोपी जन बल्लभ

मानुष जनम और हरि सेवा ब्रज बसिवौ दीजै मोहि सुल्लभ॥

आप में भक्ति भी उत्तम कोटि की थी साहित्य में वही परिभाषित भी होता है जो जीवन में होता है । आप हंसी मजाक भी किया करते थे।

वार्ता में प्रसंग आता है एक बार रानी दर्शन के लिये आई । दर्शनार्थ उनके लिये पर्दा लगाया गया। उसने प्रवेश किया। श्री नाथ जी ने उसके प्रवेश के बाद मुख्य दरवाजा जो बन्द था वह स्वयं खोल दिया। वैष्णव दर्शनार्थी एक साथ दर्शन हेतु आ गए परदा की व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई।

परमानन्द दास जी को उपहास सूझा और पद गाया ।

कौन यह खोलिबे की बान।

मदन गोपाल लाल काहू की राखन नाहिन कान॥

श्री बल्लभाचार्य जी वहीं थे उन्होंने परमानन्द दास जी को इस तरह पद लेखन नियुक्त किया। उन्होंने कहा इस प्रकार गाओ।

भली यह खोलिबे की बान।

जतीपुरा के समीप सुरभि कुण्ड पर परमानन्द दास जी का निवास स्थान था। आपका अष्टछाप में प्रमुख स्थान है। उपासना की दृष्टि से भी आप उच्च श्रेणी के भक्त थे। सब वैष्णवों में भी भगवदभाव रखते थे। एक बार सूरदास जी, कुम्भनदास जी रामदास जी आदि। आपके निवास पर पहुंचे तब आपने पद गाया –

आये मेरे नन्द नन्दन के प्यारे।

एवं

हरि जन संग छिनक जो होई पद गाया।

परमानन्द दास जी शरणागति से पूर्व ही श्रेष्ठ कवि के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे। शरणागति के उपरान्त और गहराई प्राप्त होती चली गई। एक बार श्री बल्लभाचार्य जी की आज्ञा से पद गाया। हरि तेरी लीला की सुधि आवै। यह पद सुनकर आचार्य चरण की तीन दिन तक की समाधि लग गई।

ग्रन्थों में इनका परमानन्द सागर नामक ग्रन्थ मिलता है इस ग्रन्थ में परमानन्द स्वामी, परमानन्द दास, परमानन्द एवं परमानन्द प्रभू की छाप के पद मिलते हैं।

इनका रचित संस्कृत रत्नमाला नामक ग्रन्थ भी माना जाता है। जिसका उल्लेख विद्वद वृत्त नामक ग्रन्थ में किया गया है। जो अयोध्या के संस्कृत कार्यालय से प्रकाशित हुआ वर्तमान में ग्रन्थ अप्राप्य है।

परमानन्द सागर के रूप में विद्याविभाग कॉकरोली से प्रकाशित ग्रन्थ में 1385 पद प्राप्त होते हैं। आपकी भाषा सहज एवं सरल है। संगीत व साहित्यिकता की दृष्टि से अनुपम है। आपकी रचना अद्भुत है वाणी विषय में देखें तो श्री मद्भागवतानुसार ही आपने लीलाओं का वर्णन किया है आपके पदों के विषय में इस लेख में विचार कर पाना असंभव सा ही लग रहा है। वह स्वतन्त्र लेख का विषय है।

आपके अवसान के बाद गोसाई ने सम्बोधन किया अब दोनों सागर अदृश्य हो गये। अर्थात् पुष्टि मार्ग में सूरदास जी एवं परमानन्द दास जी सागर सदृश्य थे।

★★★

अष्टछाप के भक्तकवि श्रीकृष्णदास 'अधिकारी'

(चतुर्थ सखा)

डॉ. विनोद कुमार शर्मा 'दीक्षित'

गोस्वामी श्री हरिराय महाप्रभु द्वारा प्रणीत 'चौरासी वैष्णव वार्ता' में श्रीकृष्णदास 'अधिकारी' के कृतित्व-व्यक्तित्व के सन्दर्भ में दस प्रसंगों के माध्यम से उल्लेख मिलता है। कृष्णदास हिन्दी-भक्तिकाल के अष्टछाप के कवियों में से एक थे। इनका जन्म सन 1495 (संवत् 1553) में तथा अन्तिम समय सन् 1579 (संवत् 1636) था। इनका कविता का समय सन् 1550 के आस-पास था। आप भूतल पर लगभग 83 वर्ष रहे और लगभग 700 पदों की रचना की जो 'कृष्ण सागर' में ग्रन्थस्थ है। सूरत से प्रकाशित 'तीन जन्म की लीला-भावना युक्त' में भी इनका उल्लेख मिलता है-

कृष्णदास का जन्म गुजरात के चिलोतरा नामक गाँव में हुआ था। वे कुनवी पटेल थे। उनके पिता चिलोतरा गाँव के मुखिया थे। धनलोलुप होने के कारण वे अपने असत्याचरण से भी धनोपार्जन करते थे। कृष्णदास बाल्यकाल से ही सत्यप्रेमी थे। उनकी रुचि सत्संग और कथा वार्ता में थी। यदि उनके माता-पिता इस कार्य में बाधा डालते तो वे उदास होकर खाना-पीना छोड़ देते थे। उनके इस आचरण से घरवालों की यह धारणा हो गई थी कि वे बड़े होने पर गृहस्थ में न रहकर विरक्त जीवन व्यतीत करेंगे।

एक समय एक बनजारा कृष्णदास के गाँव में आया। उस वक्त कृष्णदास की आयु लगभग बारह वर्ष रही होगी। बनजारे ने अपना माल बेचकर चौदह हजार रुपए एकत्रित किए थे। सूर्यास्त हो जाने के कारण वह रात्रि में वहीं ठहर गया। कृष्णदास के पिता ने अपने कुछ आदमी भेजकर उसी रात्रि में बनजारे का सम्पूर्ण द्रव्य लुटवा दिया। प्रात: काल होने पर जब बनजारे ने ग्राम मुखिया के पास इस घटना की शिकायत की तो कोई समाधानात्मक प्रयास न कर उल्टे उसे गाँव से बाहर निकलवा दिया। बालक कृष्णदास को अपने पिता की इस अनीति और दुर्व्यवहार से बहुत क्लेश हुआ। उसने बनजारे के पास जाकर अपने ग्राम के

मुखिया पिता की करतूत बता दी और कहा कि तू राजनगर (अहमदाबाद) जाकर वहाँ के हाकिम से फरियाद कर, मैं इस बात की गवाही दूँगा। अन्त में, कृष्णदास के साक्ष्य के आधार पर उनके पिता को बनजारे का रुपया देना पड़ा।

इस घटना के कारण कृष्णदास और उनके पिता में वैमनस्य हो गया। फलस्वरूप वे अपने पिता को नमस्कार कर विरक्त-भाव से घर से निकल गए और तीर्थयात्रा करते हुए ब्रज में आ गए। मथुरा में विश्रान्त घाट पर स्नान करने के पश्चात् कृष्णदास गोवर्द्धन आए। वहाँ सुना कि गोवर्द्धन पर्वत के ऊपर श्री देवदमन का मन्दिर सिद्ध हुआ है। महाप्रभु वल्लभाचार्य नए मन्दिर में देवदमन ठाकुर को पाट बैठाएँगे। सो कृष्णदास ने भी जाकर दर्शन किए।

महाप्रभु वल्लभाधीश ने श्री गोवर्द्धनधर श्रीनाथ प्रभु का सेवा मण्डन प्रारम्भ किया था। कृष्णदास जब मन्दिर में पहुँचे तो श्री आचार्य जी ने राजभोग की आरती की थी। दर्शन करते ही श्री गोवद्धनधर ने कृष्णदास का मन हर लिया।

श्री गोवर्द्धननाथ ने महाप्रभु जी को कहा- "जो यह कृष्णदास आयो है। बहोत दिन कौ बिछुर्‌यौ है। सो मैं याकों देखत हों।" तब आचार्य जी ने कृष्णदास के पास आकर कहा- "जो कृष्णदास! तू आयौ।" कृष्णदास ने विनती की जो-महाराज! आपकी कृपा ते आयौ। अब मोकों शरण लीजिए।" महाप्रभु जी ने कहा- "जो वेगि न्हाय कें आवौ। तेरे सामई गोवर्द्धननाथ जी देखि रहे हैं।" तत्काल ही कृष्णदास दौड़कर रुद्रकुंड में नहाकर आ गए। श्री वल्लभ महाप्रभु ने श्री गोवर्द्धननाथ जी के सन्निधान में कृष्णदास को बैठाकर नाम समर्पण कराए। कृष्णदास दैवी जीव हैं सो उसी क्षण सर्व भगवल्लीला का अनुभव हुआ।

"यमेवेष वृणुते तेन लभ्य:"- श्रुति वचन है। अर्थात् जिस जीव पर वे (ईश्वर) अनुग्रह करते हैं, उसे प्राप्त होते हैं। कृष्णदास के साथ यही हुआ। उन्होंने गुरु-वन्दना में यह कीर्तन गाया-

वल्लभ पतित उद्धारन जानौ।
सरन लेत लीला दरसावत,
ता पर ढरत गोवर्द्धन राने॥ (राग सारंग)

आज भी नाथद्वारा में कृष्ण भंडार का नाम इन्हीं के नाम पर अब तक चला आ रहा है और वहाँ का पत्र-व्यवहार आदि अधिकारी कृष्णदास के ही नाम से होता है। कृष्णदास योग्य शासक एवं कुशल प्रबन्धक होने के अतिरिक्त काव्य और संगीत में भी दक्ष हो गए। संवत 1602 में जब गुसाईं श्री विट्ठलनाथ जी ने अष्टछाप की स्थापना की तो कृष्णदास को भी इसमें सम्मिलित किया गया।

कृष्णदास का लक्ष्य श्री गोवर्द्धननाथ जी की समर्पित भाव से सेवा ही था। वे कीर्तन भक्ति में ही निरन्तर रत् रहने की आकांक्षा हृदय में संजोये रहते-

मेरे तो गिरिधर ही गुनगान।
यह मूरति खेलत नैनन में यही हृदय में ध्यान॥

चरन-रेनु चाहत मन मेरौ यही दीजिये दान।

'कृष्णदास' कौ जीवन गिरिधर मंगल रूप निधान॥

अतएव नित्य नवीन पद रचना कर कृष्णदास श्री गोवर्द्धननाथ को सुनाते जैसे मंगल गान, जागरण, जनेऊ, क्रीड़ा, वर्षा-ऋतु विलास, निकुंज-विहार, कलेवा, छाक, भोजन, ब्यारु, बीरी आरती, शयन, रास, लीला पद- जन्माष्टमी, राधाष्टमी, प्रभु स्वरूप, स्वामिनी स्वरूप, युगल रस, मन/नैन, जातिताल, अनुराग, दान, आवनी, सदा ब्रज बसैं बिहारी, वेणुनाद, मान, सुरतान्त/खंडिता, मंडली-रास, फूल मण्डली, गोवर्द्धन-पूजा, गोवर्द्धन-धारण, इन्द्र मान भंग, बसंत/होरी, डोल/हिंडोरा, विराहासक्ति आदि।

भक्तकवि भव-बन्धन से मुक्त भाव-विभोर होकर निज इष्ट के सम्मुख कीर्तन करते हुए स्वयं तो एक विलक्षण मस्ती में सराबोर होते ही हैं, सब चराचर जगत भी एक अवर्णनीय आनन्द में मग्न हो जाता है। कृष्णदास भगवान श्रीकृष्ण की लोकरंजनी लीलाओं का गायन मनोमुग्धकारी रूप में किया करते थे।

कृष्णदास भक्त हैं, कवि हैं और कलाकार भी, इन तीनों रूपों में उनका कीर्तन प्रेम, राग और रस में आप्लावित है। काव्यशास्त्र में परम प्रवीण कृष्णदास ने अपने उपास्य श्रीनाथ जी की बहुविधि लीलाओं का सरस पदावली में वर्णन किया है। इनकी ज्ञानपिपासा अन्य भाषाओं की शुद्ध लिपि ग्राह्यता स्वयंसिद्ध है। साम्प्रदायिक प्रणाली के अनुरूप नित्य के कीर्तन और वर्षोत्सव के पद सुरुचिपूर्ण ब्रजभाषा में सृजित किए।

गोवर्द्धन-पूजा

गोवर्द्धन पर्वत पूजिये।

चंदन मृगमद कपूर कुंकुम, दूध दही मधु सीजिये॥

बसन विचित्र कुसुम बनमाला, मोतिनि चित्रित कीजिये।

नव-नव पाक साक दधि ओदन, पायस घृत मधु मींजिये॥

मटुकी भरि पकवान मिठाई, ग्वालन कों बहु दीजिये।

'कृष्णदास' प्रभु कहत करत विधि, प्रेम मगन रस भींजिये॥

श्री विट्ठलेश प्रभु ने कृष्णदास के तीन कार्यों की बहुत सराहना की। एक तो अधिकारी के पद पर निष्पादित कार्यों की, दूसरे अद्‌भुत रासादि कीर्तनों की तथा तीसरे श्री गोवर्द्धननाथ जी की निष्ठापूर्वक सेवा की।

लीला-सृष्टि में स्नेह भी अलौकिक है, शाप भी अलौकिक है और ईर्ष्या भी अलौकिक है। मायाकृत नहीं है। भूमि पर यश प्रकट करने हेतु ईर्ष्या शाप बहाना मात्र है। जीवों को लीला गान से प्रभु की प्राप्ति होती है। बस यही समझ पर्याप्त है।

अष्टछाप आठौं सखा, 'द्वारकेश' परमान।

जिनके कृत गुनगान तैं, होत सुजीवन थान॥

★★★

ब्रज का गौरव बना जीएलए विश्वविद्यालय

श्रेया शर्मा

* राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद ने ए प्लस की दी मान्यता।
* 68 प्रतिशत छात्र व छात्राओं के कैंपस प्लेसमेंट का रिकार्ड।
* रिकार्ड 110 एकड़ में प्रदूषण मुक्त भूमि पर स्थापित है विश्व विद्यालय।
* वर्तमान में 12716 छात्र-छात्राएं अध्ययनरत, 640 फैकल्टी कार्यरत।
* अपने 33 हजार सफल पूर्व छात्र-छात्राओं पर जीएलए को गर्व।

धर्मनगरी वृंदावन के समाजसेवी व कारोबारी श्री नारायण दास अग्रवाल ने वर्ष 1998 में कुछ ही क्लास रूम के साथ हाईवे पर एमबीए शिक्षा का 60 बच्चों का विद्यालय प्रारंभ किया। इसके बाद जीएलए इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट, जीएलए इंस्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज और जीएलए इंस्टीट्यूट ऑफ फार्मास्यूटिकल

रिसर्च जैसे तीन नए संस्थानों की स्थापना की। तदोपरांत श्री अग्रवाल ने अपनी दूरदृष्टि और कड़ी मेहनत के बल पर तमाम कठिनाइयों को पीछे छोड़ते हुए वर्ष 2010 में जीएलए को विश्वविद्यालय बनाया।

इसे उत्तर प्रदेश सरकार ने निजी विश्वविद्यालय अधिनियम-2009 (संशोधित अधिनियम-2010) के अंतर्गत मान्यता दी। आज ये विश्वविद्यालय न केवल मथुरा या समूचे ब्रज का गौरव है बल्कि देश के निजी विश्वविद्यालयों की रेंकिंग (नेक) में दूसरे स्थान का विश्वविद्यालय घोषित किया गया है। इस समय जीएलए विश्वविद्यालय उस स्थिति में आ पहुंचा है जहां छात्र व छात्राओं के सपने उड़ान भरते हैं। अकादमिक दुनिया इस विश्वविद्यालय का लोहा मानने लगी है। तकनीकी और उच्च शिक्षा जगत में यह करिश्मा विश्वविद्यालय के कुलाधिपति नारायण दास अग्रवाल ने कुछ ही वर्ष में कर दिखाया है। रोजगारपरक पठन-पाठन की दुनिया में यह

जीएलए विश्व विद्यालय अनेक अवसर एवं चुनौती दोनों साथ-साथ लाया है। इसने वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के दौर में उच्च शिक्षा की रूपरेखा को बदल दिया है। यहां प्रोफेशनल कोर्स और शोध के साथ-साथ 68 प्रतिशत छात्र व छात्राओं के कैंपस प्लेसमेंट का रिकार्ड भी बनाया है। इसे राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद ने ए प्लस ग्रेड के साथ मान्यता दी है।

जीएलए विश्वविद्यालय का लक्ष्य वर्तमान व भावी शैक्षिक तथा व्यावसायिक क्षेत्रों में नवीनतम शैक्षिक अनुसंधान व तकनीकी प्रशिक्षण उपलब्ध कराते हुए एकेडमिक श्रेष्ठता के नये मापदण्ड स्थापित करना है। विश्वविद्यालय अपने हर छात्र का उचित मार्गदर्शन कर उसे रोजगार का सही अवसर प्रदान करने में अग्रणी है।

110 एकड़ में प्रदूषण मुक्त एवं हरी-भरी भूमि पर स्थापित मथुरा का जीएलए विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश के शैक्षिक इतिहास में सही अर्थों में एक मील का पत्थर है। सुविख्यात संस्थान जैसे आईआईटी, एनआईआईटी से जुड़े रह चुके युवा शोधार्थियों तथा अनुभवी शिक्षकों को फैकल्टी में शामिल किया गया है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की मान्यता के अलावा जीएलए विश्वविद्यालय, मथुरा को उत्तर प्रदेश सरकार, एआईसीटीई, एआईयू, फामेर्सी काउंसिल ऑफ इंडिया और एनसीटीई समेत अनेक अधिकृत संस्थानों से मान्यता प्राप्त है।

जीएलए विश्वविद्यालय ने पिछले पांच वर्ष में अपने बुनियादी ढांचा और शिक्षण अधिगम प्रक्रिया समेत कई पहलुओं को और मजबूत किया है। राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद (नैक) द्वारा 3.46 स्कोर देते हुए विश्वविद्यालय को ए प्लस श्रेणी दी गई है। अब जीएलए भारत का नंबर वन प्राइवेट विश्वविद्यालय बन गया है। इस महत्वपूर्ण उपलब्धि पर प्रमुख समाजसेवी जीएलए विश्व विद्यालय के कुलाधिपति श्री नारायण दास अग्रवाल ने इसका श्रेय संस्थान से जुड़े हर व्यक्ति की कड़ी मेहनत और लगन तथा ईश्वर की कृपा और सबकी सकारात्मक भावनाओं को दिया। देश विदेश से उनके शुभचिंतकों एवं जीएलए संस्थान से जुडे गणमान्य लोगों के उन्हें लगातार बधाई संदेश प्राप्त हो रहे हैं।

पूर्व में नैक ने जीएलए को 3.02 स्कोर के साथ ए ग्रेड से नवाजा था। समय पूर्ण होने के बाद जीएलए ने वर्ष 2022 के जून में पुन: आवेदन किया। 17 से 19 जनवरी को शिक्षाविद और विशेषज्ञों की टीम ने विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रम के पहलू, शिक्षण अधिगम एवं मूल्यांकन प्रक्रिया, अनुसंधान परामर्श व प्रसार, बुनियादी ढांचा और सीखने के संसाधन, छात्र सहयोग व प्रगति, प्रशासनिक नेतृत्व व प्रबंधन, नवाचार और सर्वोत्तम शिक्षा प्रणाली समेत सात बिंदुओं पर जांच की गई थी। टीम ने अध्ययनरत विद्यार्थियों से उच्च शिक्षा और प्लेसमेंट के बारे में पूछताछ की थी। नैक द्वारा विश्वविद्यालय को ए प्लस श्रेणी के साथ श्रेष्ठ स्कोर 3.46 प्रदान किया गया है। विश्वविद्यालय कुलपति प्रो. फाल्गुनी गुप्ता ने कहा कि जीएलए के लिए यह गर्व की बात है कि विश्वविद्यालय को नैक के मूल्यांकन में सबसे अधिक अंक मिले हैं। इस रैंक के साथ सर्वोच्च अंक पाकर जीएलए ने भारत में ए-प्लस निजी विश्वविद्यालयों की श्रेणी में पहले स्थान पर जगह बनाई है। उन्होंने बताया इस उपलब्धि के बाद अब यहां के विद्यार्थियों को नामी कंपनियों में बेहतर प्लेसमेंट की संभावनाएं बढ़ेंगी। कुलाधिपति नारायण दास अग्रवाल ने इस उपलब्धि पर प्रति कुलाधिपति प्रो. दुर्ग सिंह चौहान, कुलपति प्रो. फाल्गुनी गुप्ता, समकुलपति प्रो. अनूप कुमार गुप्ता, आइक्यूएसी निदेशक प्रो. विशाल गोयल, रजिस्टार एके सिंह एवं समस्त विभागाध्यक्षों व शिक्षकों को धन्यवाद दिया।

वर्तमान में विश्वविद्यालय के कुलपति डा. फाल्गुनी गुप्ता हैं। प्रति उप कुलपति के पद पर डा. अनूप गुप्ता कार्यरत हैं। विश्व विद्यालय में इस समय कुल 640 फैकल्टी कार्यरत हैं जबकि 535 अन्य स्टाफ है। वर्तमान में 12716 छात्र व छात्राएं इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलोजी, इन्स्टीट्यूट ऑफ बिजनेस मैनेजमैन्ट, इन्स्टीट्यूट ऑफ फार्मास्यूटिकल रिसर्च व इन्स्टीट्यूट ऑफ एप्लाईड साईन्सेज एण्ड ह्यूमिनिटीज, इंस्टीट्यूट ऑफ लीगल स्टडीज (विधि संस्थान) आदि में उच्च-स्तरीय शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इन इंस्टीट्यूट से छात्र व छात्राएं बी.टेक, डी.फार्मा, बीबीए, बीबीए (ऑनर्स), बीसीए, एम.टेक, एम.फार्मा, एम.एस.सी, डिप्लोमा, पीजी डिप्लोमा, सर्टिफिकेट कोर्स व पीएचडी कर रहे हैं।

विश्व विद्यालय को अपने 33 हजार से अधिक पूर्णत: सफल एल्यूमनाई-बेस (पूर्व छात्र-छात्राओं) पर गर्व है। विश्व विद्यालय में जो 07 इंस्टटीट्यूट हैं, उनमें कुल 79 शैक्षणिक कार्यक्रम संचालित हो रहे हैं। विश्वविद्यालय में मानक अनुरूप कुल 243 क्लास रूम हैं। विश्व विद्यालय में 135 प्रयोगशालाएं हैं। सेमीनार व कान्फ्रेंस रूम 11 हैं जबकि 18 कमरों का एक अतिथि गृह है। छात्र व छात्राओं के खेलकूद के लिए 9 प्ले ग्राउंड हैं। विश्व विद्यालय परिसर में एटीएम, कंप्यूटर लैब, कॉनवो, हॉल, मेडिकल फैसिलिटीज भी मौजूद हैं।

584 छात्र व छात्राओं ने विभिन्न खेल प्रतियोगिताओं में अवार्ड प्राप्त किए हैं। जीएलए की फैकल्टी के विभिन्न जनरल्स में 4446 आर्टीकल प्रकाशित हो चुके हैं। छात्र व छात्राओं द्वारा की गयी खोज के आधार पर 390 पैटेंट हो चुके हैं। दुनिया भर के शैक्षणिक संस्थान व अन्य संस्थान आदि के साथ 136 एमओयू हो चुके हैं जो इस समय कार्यरत हैं।

विश्वविद्यालय में अल्ट्रा-मॉडर्न टैक्नोलोजी पर आधारित श्रेष्ठ इन्फ्रास्ट्रक्चर उपलब्ध है, जिससे शैक्षिक व तकनीकी ज्ञान को सर्वश्रेष्ठ स्तर पर ले जाने का पूरा अवसर मिलता है। जीएलए विश्वविद्यालय वर्तमान में इन्जीनियरिंग की सभी महत्वपूर्ण शाखाओं में अन्डर-ग्रेजुएट, पोस्ट-ग्रेजुएट व डॉक्टरल कोर्सेज (पीएचडी, पोस्ट डाक्टरेट) उपलब्ध करा रहा है।

इसके अलावा 1.5 लाख से ज्यादा पुस्तकें, 200 से ज्यादा प्रिंट जर्नल्स, 500 से ज्यादा एमरल, एएसएमई आईईईई के ई-जर्नल्स जीएलए की सेंट्रल लाइब्रेरी की धरोहर हैं। छात्र-छात्राओं की प्रतियोगी की परीक्षाओं की तैयारी के लिए अलग व्यवस्था है। कैंपस में वाई-फाई सुविधा है। विश्वविद्यालय की सेंट्रल लाइब्रेरी हफ्ते में सातों दिन पठन-पाठन वालों का स्वागत करती है। ई-बुक और ई-रिसोर्स सेन्टर भी हैं। छात्र ऑनलाइन भी ज्ञान की दुनिया को खंगालते रहते हैं।

जीएलए के 110 एकड़ एरिया में कुल 150 फैमिली रेजीडेंस हैं। यही नहीं सभी सुविधाओं से परिपूर्ण चार गर्ल्स हॉस्टल सहित 19 हॉस्टल हैं, जिनमें पांच हजार से अधिक छात्र-छात्राएं निवास करते हैं। अगर छात्र-छात्राएं अपने इर्द-गिर्द तलाश करें तो सफलता की तमाम गाथाएं मिल जाएंगी, जिनकी बुनियाद जीएलए में मिलेगी।

हर वर्ष 86 प्रतिशत विद्यार्थियों का 500 कंपनियों में प्लेसमेंट

विश्वविद्यालय का समर्पित ट्रेनिंग व प्लेसमेंट विभाग यहां के छात्र-छात्राओं को सर्वश्रेष्ठ व परफैक्ट स्तर तक पहुंचने में समर्थ बनाता है, ताकि वे अपनी इच्छा के क्षेत्र में बेस्ट प्लेसमेंट पा सकें। विश्व विद्यालय के छात्र व छात्राओं को अब तक 500 से ज्यादा कंपनियां कैंपस प्लेसमेंट कर चुकी हैं।

प्रति वर्ष जीएलए के लगभग 86 प्रतिशत विद्यार्थियों को परीक्षा और इन्टरव्यू के माध्यम से ही कंपनियों द्वारा चुन लिया जाता है। इसके साथ ही जीएलए विश्वविद्यालय इन्डस्ट्रियल विजिट्स, गैस्ट लैक्चर्स, वर्कशॉप्स, ट्रेनिंग कार्यक्रम, विभिन्न प्रकार के डवलपमेंट कार्यक्रम, कॉन्फ्रेंस, सेमिनार आदि का निरन्तर आयोजन करता रहता है। इन विजिट्स तथा कार्यक्रमों में विशेषज्ञ फैकल्टी-मेम्बर्स, वैज्ञानिकों, इन्जीनियर्स तथा प्रतिष्ठित व सफल उद्यमियों को आमन्त्रित किया जाता है, जो यहां के छात्र-छात्राओं को अपने ज्ञान-अनुभव और अपनी सफलता के वास्तविक कारणों के बारे में बेहद दोस्ताना माहौल में बताते हैं।

जीएलए का ध्येय उच्चकोटि की रोजगारपरक शिक्षा: नारायण दास

जीएलए विश्वविद्यालय के आधारभूत सिद्धान्त व आदर्श कुलाधिपति श्री नारायण दास अग्रवाल के संस्कारपूर्ण आदर्शों पर ही आधारित हैं। श्री अग्रवाल ने बताया कि ब्रज में रोजगारपरक शिक्षा का अभाव था। खासकर तकनीकी शिक्षा की बहुत आवश्यकता थी। इसे सोच कर ही वर्ष 89 में मथुरा हाइवे पर कुछ कमरों में तकनीकी शिक्षा की कक्षाएं प्रारंभ करायी गयीं। बाद में अलग-अलग इंस्टीटयूट खोले गए। वर्ष 2010 में निजी विश्व विद्यालय अधिनियम के तहत राज्य सरकार ने जीएलए को निजी विश्व-विद्यालय का दर्जा दिया।

श्री अग्रवाल ने कहा कि आज जीएलए ने गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने और समाज की उच्च शिक्षा आवश्यकताओं को पूरा करने में अहम भूमिका निभाई है। विश्वविद्यालय के छात्र-छात्राओं को व्यापक सोच के साथ ऊंचे लक्ष्यों तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त किया गया है।

श्री अग्रवाल ने बताया कि आज देश का कोई बड़ा शहर ऐसा नहीं है जहां जीएलए विश्व विद्यालय से निकले छात्र या छात्राएं निजी व सरकारी क्षेत्र में सेवा न दे रहे हों। इस समय 3300 पूर्व छात्र व छात्राएं भी विश्व विद्यालय के परिवार से अलग नहीं हैं। उस समय मन को बहुत प्रसन्नता होती है जब बच्चे व उनके अभिभावक प्लेसमेंट के बाद हमें बधाई देने पहुंचते हैं। विश्व विद्यालय के छात्र-छात्राओं को ज्ञान व उत्साह से परिपूर्ण दिशा-निर्देश निरन्तर दिए जाते हैं। एक उच्चकोटि के शैक्षणिक व तकनीकी संस्थान के रूप में जीएलए

विश्वविद्यालय छात्र-छात्राओं को शिक्षा व तकनीकि ज्ञान सर्वोच्च स्तर उपलब्ध कराता है। मेरा कहना है कि देश और समाज के विकास व कल्याण में जीएलए विश्वविद्यालय अधिकतम योगदान देने के लिए पूर्णत: दृढ़-संकल्पित है।

कुलाधिपति श्री अग्रवाल ने बताया कि अच्छे प्रोफेशनल की मांग देश में लगातार इसलिए बनी रहती है कि हर संस्थान अपने छात्र-छात्राओं के सपनों का संस्थान बनना चाहता है। अच्छे प्रोफेशनल तैयार करने के लिए विभिन्न ऐसे मुद्दे हैं जो जीएलए अपनाता है। जीएलए विश्वविद्यालय ने प्रारंभ से ही शिक्षा की महत्ता को ध्यान में रखते हुए अध्यापकों और छात्रों को नई शिक्षा नीति के अनुरूप ढाला है। यही वजह है कि आईआईटी, एनआईटी, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों के शिक्षकों के सहयोग से तथा कंपनियों की आवश्यकताओं के अनुसार अध्ययन कराया जाता है। व्यावसायिक शिक्षा के महत्व पर शुरु से ही जोर है। विश्व विद्यालयों सभी शिक्षकों को विभिन्न कार्यशालाओं व शोध कार्यों के माध्यम से शिक्षा की उत्कृष्टता को बढ़ाने में विश्वास रखता है।

कुलाधिपति ने बताया कि प्रति वर्ष जीएलए का प्लेसमेंट ग्राफ ऊचाईयों को छू रहा है। जीएलए ने इंफोसिस, विप्रो, टीसीएस, एचसीएल, जिंदल स्टील, एचएमएसएल, बोस्च, होंडा मोटर्स एंड स्कूटर्स, सुजुकी मोटर साइकिल, रिलायंस, हिन्दुस्तान ग्लास, आईडीबीआई, एचडीएफसी, क्रायोबैंक, अमेरॉन बैटरीज, केईसी, सीज फायर, टेक्प्रो आदि नियोक्ता विश्वविद्यालय के नियमित अतिथि हैं। यह एक ब्रांड के रूप में जीएलए के प्रति साल दर साल उनके बढ़ते भरोसे की ही पुष्टि करता है। इस वर्ष भी विश्वविद्यालय में 165 कंपनियों ने कैंपस रिक्रूटमेंट कर 1500 से अधिक विद्यार्थियों को रोजगार दिया है।

सभी पाठ्यक्रमों के छात्रों के विकास के लिए पीपीटी, पर्सनल्टी डेवलपमेंट प्रोग्राम आदि के माध्यम से व्यावसायिक विकास प्रदान करने के लिए कई मंच नियमित रूप से प्रदान किए जाते हैं। इसके अलावा कंपनियों द्वारा विभिन्न टूल्स पर कार्यशालाओं, सेमिनार, अतिथि व्याख्यान आदि कार्यक्रम के माध्यम से छात्रों को कंपनी स्तर की कार्य प्रणाली सिखाई जाती है।

जीएलए शिक्षा के साथ सेवा धर्म का कर रहा निर्वहन

जीएलए विश्वविद्यालय न केवल शैक्षणिक क्षेत्र में अग्रणी है बल्कि इसके द्वारा सामाजिक सेवा के तमाम दायित्वों का निवर्हन भी किया जा रहा है। सेवा के कार्यों में कुलाधिपति नारायणदास अग्रवाल, सचिव नीरज अग्रवाल, वित्तीय कार्यभार संभालने वाले विवेक अग्रवाल, प्रति उप कुलपति डा. अनूप गुप्ता बेहद रुचि लेते हैं। हाल ही में गोवर्धन का कुसुम सरोवर, महावन की रसखान समाधि को गोद लिया है। इसके अलावा जीएलए विश्व विद्यालय के आसपास के ग्रामीण इलाकों में और प्राथमिक विद्यालयों में सेवा के कार्य आगे बढ़ाए हैं। कोरोना में भी भूखों की सेवा की। उचित इलाज की व्यवस्था करायी।

जीएलए विश्व विद्यालय दुनिया के संग बांट रहा ज्ञान

जीएलए विश्वविद्यालय की शैक्षणिक गुणवत्ता लगातार बढ़ रही है। कैमिस्ट्री, फिजिक्स, कम्प्यूटर साइंस, जूलाजी जैसे विभागों ने इटली, हंगरी, यूएसए के अलावा विश्व के देशों के विश्वविद्यालय, सरकारी व

गैर सरकारी संस्थानों से करार (एमओयू) किया है। यह छात्रों की अकादमिक फलक को अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक ले जाता है।

इसी प्रकार से जीएलए विश्वविद्यालय भी खेलकूद में आगे रहा है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खेले जाने वाले बैडमिंटन, फुटबाल, वॉलीबाल, क्रिकेट, योगा सेंटर के अलावा एथलेटिक्स के खिलाड़ी नाम कमा चुके हैं।

कॉर्पोरेट की जरूरतों के अनुरूप है हमारा पाठ्यक्रम: डा. अनूप

जीएलए विश्वविद्यालय प्रति उप कुलपति डा. अनूप गुप्ता कहते हैं कि विश्व विद्यालय के पाठ्यक्रमों की रूपरेखा विशेष तौर पर कॉर्पोरेट में नवीनतम आवश्यकताओं के अनुसार तैयार की गयी है। पाठ्यक्रमों को रूपरेखा तैयार करते समय हमने भारत में तैयार हो रहे इंजीनियरों के कौशल तथा प्लेसमेंट को लेकर नैसकॉम, मैंकिन्जे तथा विश्व बैंक की रिपोर्ट को अपेक्षित महत्व दिया है। यहां से निकलने वाले स्नातकों के अभिव्यक्ति कौशल, विश्लेषण क्षमता, समस्या समाधान तथा निर्णय क्षमता, नैतिक दर्शन आदि क्षेत्रों में प्रशिक्षण व विकास के लिए पाठ्यक्रम तैयार किये गये हैं। इस बात पर भी ध्यान दिया गया है कि हर व्यक्ति का सीखने का एक तरीका होता है जैसे कोई सुनकर सीखता है तो कुछ पढ़कर तो कुछ परस्पर विमर्श के जरिए, कुछ समस्याओं के समाधान के साथ तो कुछ प्रोजेक्ट गतिविधियों से तो कुछ लोग करके सीखते हैं।

स्टार्टअप शुरू कर उद्यमी बनने के रास्ते खोलेगा जीएलए

जीएलए विश्वविद्यालय में राज्य सरकार स्टार्टअप इनक्यूबेटर सेंटर बनाने जा रही है।

प्रदेश सरकार के स्टार्टअप इनक्यूबेटर नीति के तहत सरकार के आईटी एवं इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग द्वारा प्रदेश में इस बार 7 नए केंद्रों को मंजूरी दी गई है। इनमें एक केंद्र जीएलए विश्वविद्यालय मथुरा बना है। स्टार्टअप इनक्यूबेटर सेंटर बनने के बाद से निकटवर्ती क्षेत्रों से लेकर संस्थान से जुड़ा हर शख्स उत्साहित है।

इस सेंटर के बनने के बाद जीएलए विश्वविद्यालय में प्रदेश के प्रतिभा वान शिक्षित प्रशिक्षित युवा बेरोजगार दर-दर भटकने के बजाए स्टार्टअप शुरू करके उद्यमी बनने के रास्ते पर कदम बढ़ाएंगे।

प्रदेश में स्टार्ट अप हेतु अनुकूल वातावरण तैयार करने में इन सेंटरों की विशेष योगदान रहेगा। प्रदेश सरकार की इस नीति के तहत प्रदेश के मेहनती और योग युवाओं को इन्नोवेशन और उद्यमिता के विकास हेतु आर्थिक सहायता भी प्रदान की जाएगी। विश्वविद्यालय प्रदेश के युवाओं का भविष्य बनाने वाला सेंटर भी कहा जाने लगेगा।

श्री गोविन्द स्वामी जी

(पंचम सखा)

भागवताचार्य पूर्ण प्रकाश कौशिक

श्री गोविन्द स्वामी सखा भाव से श्रीदामा का अवतार और सखी भाव से भाँमा सखी के अवतार माने जाते हैं। आप का जन्म संवत 1562 के लगभग राजस्थान के भरतपुर जिला में अंतरी ग्राम में हुआ था। आप जाति से सनाढ्य ब्राहाण थे। ये काव्य तथा संगीत के उच्चकोटि के साधक थे। उच्चकुल में जन्म होने के कारण इनके कई शिष्य थे। इसलिए इन्हें सब स्वामी कहते थे। ये ठाकुरजी के प्रति सखा भाव रखते थे तथा श्री गोवर्धननाथ जी के साथ नित्य खेला करते थे और प्रभु प्रेम में सदैव छके रहते थे।

नित्यलीला परिकर होने के कारण श्री गोविंदस्वामी जी को भक्ति का संस्कार जन्मजात ही था तथा आप में कवित्व शक्ति भी स्वत: सिद्ध थी। अत: आप बाल्यकाल से ही कविता करने लगे थे। आपके पदों को कंठस्थ करके प्रचुर गायक जहाँ-तहाँ विशेष सम्मान प्राप्त करते थे। जब कोई-कोई वैष्णव आपकी पद रचना का श्रीविट्ठलनाथ गोसाँई जी के सम्मुख गायन करते तो श्री गोसाँईजी अति प्रसन्न होते और उन्हें ठाकुर जी का भोग-प्रसाद भी प्रदान करते, ये वैष्णवजी श्री गोविन्द स्वामीजी के निकट आकर प्रसन्नता का शुभ समाचार सुनाते। एक बार श्रीभगवद् इच्छा से श्रीवृन्दावन में श्री गोविंद स्वामी जी का श्रीविट्ठलनाथ गोसाँईजी के एक सेवक से मिलाप हुआ तो सत्संग वार्ता के प्रसंगवत् श्री गोविंद स्वामी जी ने सेवक से पूछा कि-"श्रीठाकुरजी की लीलाओं का साक्षात् दर्शन किस प्रकार से हो?" तब उन वैष्णव ने कहा कि- "मैं इस सम्बन्ध में और कभी बताऊँगा"। गोविन्दस्वामी जी ने कहा कि- "मैं तो इस रहस्य को समझने के लिए अत्यन्त ही आर्त हूँ और आप कहते हैं कि बाद में बताऊँगा, श्रीगोविन्दस्वामी जी ने कहा कि मैं कब तक इस प्रकार से अबोध हुआ पड़ा रहूँगा? तब उन वैष्णवजी को श्रीगोविन्द स्वामी जी पर दया आई और वह बोले कि-

"आजकल तो श्रीठाकुरजी की प्राप्ति तो उन्हीं के द्वारा ही सम्भव है।" तब श्री गोविन्द स्वामी जी ने उन वैष्णवजी से निवेदन किया कि मुझे आप गोकुल ग्राम में ले चले और आप श्री विट्ठलनाथ गोसाँईजी का सेवक बनवा दें, द्वितीय दिवस दोनों ही गोकुल आये और उस समय सन्ध्या कर रहे थे। श्रीविट्ठलनाथ गोसाईजी, श्रीठाकुरजी तो प्रीति के अधीन हैं और यह तो कर्मकाण्डरत प्रतीत होते है इसलिए श्रीठाकुरजी इनके क्यों अधीन होंगे। इतने में श्रीविट्ठलनाथ गोसाँईजी ने निज नित्यकृत्य से निवृत्त होकर इनके समीप आकर पूछा कि- "गोविन्द! तुम कब आये? प्रश्न सुनकर ही इनका संदेह निवृत्त हो गया, गोविन्द स्वामी जी समझ गये कि श्रीगोसाँईजी तो श्रीठाकुरजी की भाँति ही सर्वज्ञ जान पड़ते हैं क्योंकि बिना पूर्व के किसी जान-पहचान के परिचित जैसे नाम लेकर कुशलता पूछ रहे है, ऐसा लगता है कि हमारी और इनकी प्राचीन (जन्म-जन्मान्तर) की जान पहचान है। श्रीगोविन्द स्वामीजी ने उत्तर दिया कि- "महाराज! अभी ही आया हूँ।" तत्पश्चात् श्रीगुसाँईजी ने राजभोग के अनन्तर इन्हें श्रीठाकुरजी का दर्शन कराया तो साक्षात् बालरूप का दर्शन हुआ। अब तो श्री गोविन्द स्वामीजी से नहीं रहा गया और इन्होंने श्रीगोसाँईजी से प्रेमयुक्त उपालम्भ देते हुए कहा कि- "महाराज! आपने प्रथम तो मुझे अपना कर्मकाण्डी रूप दिखाया और अब देखता हूँ तो आपके यहाँ पर साक्षात् श्रीप्रभुजी ही विराजमान हैं।" तब श्रीगोसाँईजी ने कहा की- "गोविन्द बात यह है कि भक्ति तो फलरूपी है और कर्ममार्ग काँटारूपी है। जिस प्रकार से काँटों से पुष्पों की रक्षा होती है ठीक उसी प्रकार से ही कर्ममार्ग रूपी काँटों की बाढ़ से भक्तिरूपी फल की सुरक्षा होती है, अत: मैंने कर्मयोग की रीति दिखलायी।" रहस्य की यह बात सुनकर श्रीगोविन्द स्वामी जी अति प्रसन्न हुए, फिर आपके अनुरोध पर श्रीगोसाँईजी ने आपको विधिपूर्वक वैष्णव-दीक्षा प्रदान की, ब्रह्म-सम्बन्ध कराया। अब श्रीगोविन्दस्वामीजी से आप श्रीगोविन्ददास हो गये। श्रीगोविन्ददास जी ने अपनी जन्मभूमि आँतरी छोड़कर श्रीगोकुल (महावन) को ही अपना निवास-स्थान बनाया, आप पर श्रीविट्ठलनाथ गोसाँईजी विशेष कृपा करते थे। ठाकुरजी से पहले भोग माँगना :

आवत हो भोग महासुंदर सुमन्दिर कौ रहयौ,
मग बैठि कही आगै मोहिं दीजियै।
भयौ कोप भारी थार डारि जा पुकार करी,
भरी न अनीति जात सेवा यह लीजियै॥
बोलिकै सुनाई अहो कहा मनभाई?
तब बोलिके बताई अजू बात कान कीजियै।
पहिले जु खाय वन माँझ उठि जाय पाछे पाँऊ,
कहाँ धाय सुनि मति रस भीजियै॥

एक दिन गोविन्द सखा रसोईए से बोले पहले मुझे भोग लाकर दे दो, मंदिर में बाद में ले जाना। इतना सुनते ही रसोइये को क्रोध आ गया और उसने थाल को जमीन पर पटक दिया। श्री गुसाँईजी से उसने शिकायत की तब श्रीगुसाँईजी ने गोविन्द को बुलाकर पूछा कि तेरे मन में क्या है? गोविन्द सखा बोले आप से ठाकुरजी

पहले खाकर वन को चले जाते है। और मैं भोजन करके बाद में वन को जाता हूँ, तो ये मुझे मिलते ही नहीं है मैं ढूड़-ढूड़ कर हार जाता हूँ। तभी से श्रीगोसाँईजी ने ऐसी व्यवस्था कर दी कि मंदिर में थाल जाते समय ही अमनियाँ एक थाल गोविन्द स्वामी को दे दिया जाता।

यमुना जी के प्रति निष्ठा : गोविन्द स्वामीजी श्री यमुना जी के प्रति साक्षात् श्रीजी की भावना करते थे। कभी भी पाँव नहीं डालते थे। एक बार श्री गोसाईजी के पुत्र श्रीबालकृष्ण जी तथा श्रीगोकुलनाथ जी ने उन्हें पकड़ कर यमुना स्नान कराना चाहा। तो इन्होंने अपनी निष्ठा की बात बताई। तो उन लोगों ने इन्हें छोड़ दिया और स्वयं भी भावपूर्वक दर्शन करने लगे तब उन लोगों को भी श्रीयमुना जी ने श्रीजी स्वरूप में दर्शन दिए।

ठाकुर जी को कंकड़ी मारी : एक बार गोविन्द दास ने अगुँली से ही ठाकुरजी को कंकड़ी मारी तो श्रीनाथ जी एकदम चौंक पड़े। तब श्रीगोसाँई जी बोले गोविन्द दास यह तुमने क्या कियो ? तब गोविन्द दास बोले- "अपनो सो पूत, परायो ढ़ढ़ीगर" अर्थात् अपनो पूत सपूत और दूसरे को मूरी-गाजर। देखो जब श्रीठाकुरजी ने हमारी तरफ आठ कंकरी मारी तब तौ आपको नैकहु रिस नहीं आई और जब मैने एक मार दई तौ आप आँखे लाल-पीली कर रहे हौ। यह सुनकर श्रीगोसाँई जी अपनी हँसी नहीं रोक सके।

धमार भी भाग गई : गोविन्द दास लीला का चिन्तन करते हुए धमार का पद गा रहे।

श्री गोवर्धनराय लाला, तिहारे चंचल नयन बिसाला।
तिहारे उर सोहे बनमाला, ताते मोही सकल ब्रजवाला॥
खेलत-खेलत तहाँ गए, जहाँ पनिहारिनि की बाट।
गागर ढोरी सीस ते कोऊ भरन न पावे घाट॥
नंदराय के परम लाड़िले, बलि ऐसो खेल निवारी।
मन मे आनन्द भरि रहयो, मुख जोवत सकल ब्रजनारि॥
अरगजा कुंकुम घोरि के प्यारी, लीनो कर लपटाय।
अचकां अचकां आइ कै भाजी, गिरिधर गाल लगाय॥
बस तीन तुक गा कर आप चुप हो गए, आगे गा न सके।

श्री गुसाई जी बोल उठे जो गोविन्ददास ने कहा- जो महाराज। धमार तो भाजि गई अरू मन अरूझाय गयो। अचका-अचका आय के भाजि गिरिधर गाल लगाय। श्रीजी ही भाजि गई इसलिए ख्याल उतना ही रहा। खेल आगे हो तो आगे गाँऊ। अब खेल कहाँ से हो। यह सुनकर श्री गुसाई जी बहुत प्रसन्न हुए और शेष तुक आप श्री ने इस प्रकार पूर्ण की-

इहि विधि होरी खेलहि ब्रजवासिनी संग लाई लाला।
श्री गोवर्धन रूप पर जन गोविन्द बलि बलि जाइ लाला॥

गोविन्द दास जी घोड़ा बने : गोविन्द दास जी श्रीठाकुर जी के साथ खेलते, झगड़ते और लाड़ लड़ाते। एक दिन श्रीनाथ जी गोविन्द दास जी कौ घोड़ा बनाकर उनके ऊपर सवार थे। गोविन्द दास जी को लघुसंका

लगी। उन्होंने कहा जय जय उतरो श्रीनाथजी ने कहा घोड़ा बनाकर उनके ऊपर सवार थे। गोविन्द दास जी को लघुसंका लगी उन्होंने कहा जय जय उतरो श्रीनाथजी ने कहा घोड़ा क्या सवार को उतारकर लघुसंका करता है तो गोविन्द दास जी खड़े-खड़े लघुसंका करने लगे। एक वैष्णव ने यह देख श्रीगोसांई जी से शिकायत की। गुसाँई जी ने पूछा गोविन्द तुमने आचार विचार को एक दम क्यों तिलान्जलि दे दी है, उन्होंने हाथ जोड़ कर कहा क्या घोड़ा कभी बैठ कर लघुसंका करता है? अरे! उस समय श्रीनाथ जी मुझे घोड़ा बनाकर मेरे कंधे पर सवार होकर वन में खेलने जा रहे थे। इस अन्धे ने मुझे लघुसंका करते हुए तो देख लिया परंतु श्रीनाथजी इसे दिखाई नहीं दिए इसलिए यह शिकायत करने चला आया। गुसाँई जी गोविन्द दास का जबाब सुनकर मुस्कुरा दिए।

ठाकुर जी को गिल्ली मारी : गोविन्द दास जी श्रीनाथ जी के साथ गिल्ली छंड़ा खेल रहे थे। श्रीठाकुर जी बिना दाए दिए ही भाग गाए, गोविन्द दास ने क्रोधित हो गिल्ली मारी। पुजारी ने देख लिया तो धक्का देकर मंदिर से भार कर दिया। ये कुण्ड के किनारे बैठ गए और सोचने लगे की ठाकुर इसी मार्ग से जाएगा तो मजा चरवाऊँगा। उधर श्री गोसाँई जी ने ठाकुर के सामने भोग रखा पर उन्होंने ग्रहण नहीं किया। गुसांई जी ने पूछा तो ठाकुरजी ने कहा यदि आप मुझे खिलाना चाहते है तो पहले गोविन्द दास को प्रसन्न कीजिए और पूरा व्रतान्त बताया। कहा- अब गोविन्द दास बाहर बैठ कर मुझे गाली दे रहा है मार्ग रोक कर बैठा है। मैं बाहर निकालूँ तो वह बहुत मार लगाएगा आप वाहै मनाओगे तभी मैं कुछ ग्रहण करूंगौ।

वन तन खेले विन बनत न मौकौ ने कु।
मनत जु गारी अन गनत लगावै गौ॥
सुधि वुधि मेरी भई बडी चिन्ता मोहि।
ल्याइये जू ढूँढि कहूँ चैन ढ़िग आवैगौ॥
भोग जे लगाये मैं तो तनक न पावै।
रिस वाकी जब जाय तब मोहि कछु आवैगो॥
चले उठि धाय नीठ-नीठ कै मनाय त्याये।
मन्दिर में खाय मिलि कही गए लावैगौ॥

गुसाई जी ने कही तुम्हें वन में जाने की क्या आवश्यकता है मन्दिर के आँगन में ही खेल लियौ करौ। ठाकुरजी ने कही- मोकु आँगन में खेलवो प्रिय नाय लगे वा समय गोविन्द दास जी नै पद गाया-

पोत लै आयो भाजि गंवार।
खोल किवार धँस्यो घर भीतर सिखै दिये लंगवार॥
कबहू तो निकसैगो बाहर एसी दउँगो मार।
गोविन्द प्रभू सों बैर करकै सुखी न सोवै यार॥

ठाकुरजी की बात सुनकर गुसाँई जी गोविन्द दास को मनाने चले। गोविन्द दास गुसाँई जी को देख कर भागने लगे कि गुसाँई मारेंगे। श्री गुसाँई जी ने बहुत विश्वास दिलाया तब जैसे तैसे लौटकर आए। गोविन्द मन में

सोचते आ रहे थे कि मुझे देखकर ठाकुरजी जी सिर नीचा कर लेगें तो क्षमा कर दूँगा और जरा भी सर उठाया तो मारे बिना नहीं छोड़ूगाँ। भगवान ने भक्त का मान रख दिया, गोविन्द को देखते ही सिर झुका लिया और गोविन्द का क्रोध शांत हो गया। फिर तो दोनों ही गले मिले।

ब्रज भूमि के प्रति श्रद्धा : ब्रजरज में उन्हें मदनमोहन श्रीनाथजी की चिन्मयता अनुभव होती थी। उन्होंने ब्रज महिमा का वर्णन करते हुए कहा है कि बैकुंठ में जाकर क्या होगा ? उसमें कालिन्दी की श्यामता, नंद यशोदा का वात्सल्य, श्यामसुन्दर का बाँसुरीवादन और राधारानी के चरणारविन्द का दर्शन नही हो सकता। इन चिन्मय पदार्थों के दर्शन का सौभाग्य ब्रज में ही मिल सकता हैं। उन्होंने लिखा–

कहा करौ बैकुण्ठ जाय।
जहाँ नहीं बंसीवट जमुना गिरि गोवर्धन नंद की गाय।
जहाँ नहीं ये कुँज लता द्रुम मंद सुगंध बहत नहीं बाइ।
कोकिल मोर हंस नहिं कूजत, ताको बसिबो कहा सुहाइ॥
जहाँ नही बंसी धुनि बाजत, कृष्ण न पुरवत अधर लगाइ।
प्रेम पुलक रोमांच उपजत, मन क्रम बच आवत नहि दाइ॥
जहाँ नहीं ये भुव वृन्दावन, बाबा नंद जसोमति माइ।
गोविन्द प्रभु तजि नंद सुवन कों, ब्रज तजि वहाँ बसति बल॥

गोविन्ददास ने मुक्ति का परित्याग कर भक्ति की राजधानी में अपने आपको नीलाम कर दिया।

प्रेम भक्ति को प्रधानता : गोविन्ददास जी के मन में श्रीठाकुरजी की अचला भक्ति जाग चुकी थी। वे अधिकांशत: ग्वालभोग के समय की लीलाओं का वर्णन करते थे। उनका यह वर्णन अमित माधुर्य से सराबोर होता था। प्रभु की निकुंज लीलाओं का वर्णन भी आपने बहुत रोचक किया है। कोटि-कोटि काम जिनके शरणागत हैं, उन श्रीनाथजी के सिंगार का आपने गायन किया है। उन्होंने भगवत् प्राप्ति के मार्ग प्रेम-भक्ति को ही प्रधानता दी है, ज्ञान और कर्म उनकी दृष्टि में गौण हैं। उनकी भक्ति है–

प्रीतम प्रीति ही ते पैये।
जदपि रूप गुन सील सुघरता, इन बातनि न रिझैये।
सत कुल जनम, करम शुभ लच्छन वेद पुरान पढ़ैये।
गोविन्द प्रभु स्नेह सुवालों रसना कहा नचैये॥

गोविन्द गमन : कलिन्द नंदिनी के तीर पर कुँज लीला में मग्न राधाकृष्ण का ही उन्होंने आजीवन विहार-दर्शन किया। श्री गोसाई विट्ठलनाथ जी के लीला प्रवेश के समय ही संवत् 1642 वि. कार्तिक कृष्ण सप्तमी को उन्होंने गोलोक की यात्रा की।

गोवर्धन ऐरावत कुण्ड के निकट उन्होंने अपने पार्थिव शरीर का त्याग किया।

★★★

परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदास जी

(षष्ठ सखा)

गौरव गोस्वामी

परम भगवदीय श्री चतुर्भुजदास जी का जीवन कृष्ण प्रेम की ऐसी निर्मल धारा है जो भक्तों के हृदय की प्यास को संतृप्त करने के लिए ही बहा करती है। विशाल सखा के साक्षात् स्वरूप श्री चतुर्भुज दास जी का जन्म वि.सं. 1597 को जमुनावता (गोवर्धन) में अष्टछाप के सिरमोर श्री कुंभनदास जी के घर हुआ पिता-पुत्र दोनों ही अष्टछाप में जड़े ऐसे रत्न हुए कि इनकी सानी का त्यागी और ब्रजरस को जानने वाला कोई दूसरा नहीं हुआ। भक्ति और भाव के ऐसे मार्ग से इन्होंने प्रभु को प्राप्त किया जो श्री गोवर्धन नाथ जी के सख्य रस से रंगा हुआ था। ब्रज की प्राचीन वाणी है-

"कृष्ण तो पाएं जाऐं पर पाइवै में भेद है।"
कोई पावै ब्रहम कृष्ण कोई परमात्मा कूं
कोई भगवान जानें पाय स्वाद विशेष हैं॥
कोई पावै राजा कृष्ण कोई पावै स्वामी कृष्ण
कोई पावै सखा कृष्ण कोई खिलावै भरि गोद है॥
कोई पावै मधुर भाव गोदी भाव सखो भाव
याते कृष्ण तो पाए जाऐं पर पाइवै में भेद है॥

कोई कैसे श्रीनाथ जी को अपनी प्रीति के बंधन में बांध कर बस कर लेता है ये रीति तो श्री चतुर्भुजदास जी के जीवन चरित्र से ही दिखाई देती है। इनके पिता गोरवा क्षत्रिय कुल से परम भक्त श्री कुंभनदास जी है और माता भी श्री आचार्य चरण की सेवक रहीं तो ऐसे परम भक्त युगल की संतान श्री चतुर्भुजदास जी श्रीनाथ जी की सख्य भक्ति रस रूपी प्रसादी ही थे। ये अपने माता-पिता की सातवी संतान हुए। इनके पाँच बड़े भाई तो लौकिक आसक्ति से युक्त थे इसलिए श्री कुंभनदास जी ने इनको स्वयं से अलग कर दिया था। इनके छठवें भाई कृष्णदास ने श्रीनाथ जी की गौ की नाहर (सिंह) से प्राण रक्षा हेतु अपना जीवन न्यौछावर कर दिया। तब श्री कुंभनदास ने श्रीनाथ जी से इच्छा की कि- हे प्रभु मुझे सत्संग के लिए एक परम भगवदीय पुत्र की प्राप्ति हो इसके फलस्वरूप ही श्री चतुर्भुज दास जी इनकी सातवीं संतान के रूप में प्रकट हुए।

श्री चतुर्भुज दास जी का लीला स्वरूप परिचय:- श्री चतुर्भुज दास जी दिन की लीला में श्रीजी के विशाल सखा हैं एवं रात्रि लीला में ये 'विमला' सखी हैं। इसमें गो. श्री द्वारकेश जी का पद प्रमाण है।

सूरदास सो कृष्ण तोक परमानंद जानो।
कृष्णदास सो रिषभ छीतस्वामी सुबल बरवानों॥
अर्जुन कुंभनदास चतुर्भुजदास विशाला।
नन्ददास सो भोज स्वामी गोविन्द श्री दामा॥
अष्टछाप आठों सखा 'द्वारकेश' परमान।
जिनके कृत गुनगान करि होत सुजीवन धान॥

इनकी गिरिलीला में बड़ी आसक्ति रही। हरिराय जी के एक पद अनुसार चतुर्भुज दास जी श्री नाथजी की दुमाला का ही स्वरूप थे।

"गोविन्द स्वामी तिहारे साजें चतुर्भुजदास दुमाले गजे"

श्रीनाथ जी के श्री हस्त सों इनका प्रागट्य हुआ है ऐसी पुष्टि मार्ग में मान्यता है। इनकी प्रमुख लीला अन्नकूट ही मानी गई है। भोग के दर्शन में इनको कीर्तन सेवा प्राप्त है। श्री गोकुलनाथ जी के स्वरूप में इनकी अतीव आसक्ति है। गिरिराज जी के आठ द्वारों में से रूद्रकुंड आम्रवृक्ष के नीचे द्वार में इनका निवास है। ये गिरिराज का तीसरा द्वार है।

पुष्टिमार्ग में प्रवेश :- वैसे तो ये निज परिवार जीव है लेकिन जब ये 41 दिन के हुए तो वि.सं. 1597 में ही श्री कुंभनदास जी इनको लेकर श्री गुसाई जी के सेवक किए। जैसे ही नाम निवेदन कर ब्रह्म संबंध की तुलसी जी श्री नाथ जी को चरण समर्पित कर इन्होंने की इतने में ही इनको लीला का स्फुरण हो गया। इनको श्री गुसाई जी के स्वरूप का ज्ञान हुआ और सहसा ही ये गा उठे ।

"सेवक की सुख राशि सदा श्री बल्लभ राजकुमार"

ये श्री चतुर्भुजदास जी ने पहला पद गाया इसे सुनते ही श्री गुसाई जी एवं इनके पिता श्री कुंभनदास जी गद-गद हो गए कुंभनदास जी ने जान लिया कि मेरा सत्संग आ गया जैसे-जैसे चतुर्भुजदास जी बड़े होने लगे दोनों पिता-पुत्र श्री गोवरधन नाथ जी एवं श्री गोसाई जी की वार्ता का सत्संग किया करते श्रीनाथ जी ने कुंभनदास जी को आशीर्वाद दिया था कि चतुर्भुजदास ने पाँच वर्ष की उम्र तक मैं ही रहूंगा। दोनों पिता पुत्र नित्य श्रीजी का सत्संग किया करते ऐसी ऐसी रहस्य वार्ता लीला का वर्णन श्री चतुर्भुजदास जी सुनाते कि कुंभनदास जी का हृदय गद-गद हो उठता ।

आलौकिक प्रतिभा:- एक समय श्री कुंभनदास जी को अपने घर जमुनावता से श्री जी द्वार का दिव्य दर्शन हुआ और वो गाने लगे- "वो देखो बरत झरोखन दीपक हरि पौढ़े ऊँची चित्तसारी" इतना कहकर वो चुप हो गये तभी छोटे से श्री चतुर्भुजदास जी ने आगे की पंक्ति कहना शुरू किया-

"सुंदर वदन निहारन कारन राख्यों है बहुत जतन कर प्यारी"

इनकी ऐसी आलौकिक प्रतिभा और लीला में प्रवेश को देखकर श्री कुंभनदास जी अवाक रह गये। तब से ये अपने पुत्र से रहस्य निकुंज की वार्ताओं को रस के साथ कहा करते।

रस साहित्य के सागर:- श्री चतुर्भुज दास जी रस साहित्य के सागर स्वरूप है। एक बार श्री प्रिया जी द्वारा धराए श्रृंगार का अलौकिक दर्शन भेद जानकर इन्होंने पद गाया-

"सुभग सिंगार निरख मोहन कौ।
दरपन कर लै पियहिं दिखावै॥
आपुन नेक निहारिये बलि जाऊं
आज की छवि कछु कहत न आवै॥"

ऐसे ही तब एक पद - "आज और काल्ह और" इनके ऐसे दिव्य साहित्य को देखकर ही भक्त कहते हैं कि ये लीला को देखकर गाया करते थे। एक बार गोकुलनाथ जी ने रास का आयोजन चंद्र सरोवर पर किया तो जब तक श्री गिरिधर जी के संग श्रीजी चंद्रसरोवर नहीं पधारे तब तक इन्होंने गाया ही नहीं जैसे ही रास नायक प्रभु का दर्शन इन्होंने प्राप्त किया ये सहसा ही गा उठे :-

"अद्भुत नर भेष धरैं यमुना तट स्याम सुंदर,
गुन निधान गिरिवरधर रास-रंग नाचे॥"

श्रीनाथजी ने जब प्रसन्नता करी तो फिर दूसरो पद-

"प्यारी ग्रीवा ये भुज मेलि निरखत पिय सुजान"

इस पद को सुन कर श्रीनाथ जी बड़े प्रसन्न हुए और श्री चतुर्भुजदास लाल जी के प्रसन्न मुख को देख अश्रुधारा बहाने लगे।

एक बार श्री गुसाई जी ने रामदास कीर्तनीया को बुलाने के लिए अप्सरा कुंड़ पर भेजा। वहाँ से श्री चतुर्भुजदास जी जैसे ही फूल लेकर श्री गोवर्धन नाथ जी की कंदरा के पास आये। श्री प्रिया प्रियतम के उर्नींदे श्री गुफा जी सों बाहिर आते हुए इनको दर्शन हुए ।-

"श्री गोवर्धन गिरि-सघन कंदरा रैंन निवास कियो पिय प्यारी॥"

इस पद को सुनकर श्री गोवर्धन नाथ जी बोले कछु और गाओ। तब श्री चतुर्भुज दास जी ने ताही समय-

"रजनी राज कियो निकुंज नगर की रानीं"

ये पद गाकर सुनाया। ऐसी दिव्य कृपा इनके ऊपर श्रीजी की रही। तब लौट कर श्री गुसांई जी इन पर बड़े प्रसन्न हुए और श्रृंगार के समय कीर्तन की सेवा इनको प्रदान करी।

श्री गुसाई विठ्ठल नाथ जी की कृपा फल से ही ये लीला के अधिकारी हुए।

सखा भाव के उपासक :- श्री नाथ जी के परम सखा भाव में रहने वाले श्री चतुर्भुजदास जी श्रीजी के संग चोरी करने भी जाया करते। श्री गोवर्धन नाथ जी इनको सखा मानकर बड़ा चिढ़ाया करते थे । इनको गोरवा क्षत्रिय होने के कारण कहा करते -

गाँम में गोरये खेत में बबूल

जहाँ देखो तहाँ सूल ही सूल

इनको कहकर जबरदस्ती इनका धरेजा करा दिया और फिर नित्य इनको चिढ़ाते कि भवदीय कुंभनदास के छोरा ने धरेजो कर लियो और जोर-जोर से हंसते ऐसा सखा भाव श्री चतुर्भुजदास जी से ठाकुर जी रखा करते। श्री चतुर्भुजदास जी का चरित्र ऐसे ही सखा भाव की लीलाओं से भरा हुआ है।

श्री गोवर्धनधर प्रभू से प्रेम विरह वेदना:- श्री गोवर्धननाथ जी के दर्शन बिना ये जल भी ग्रहण न करते। इतना प्रेम ये ठाकुर जी से किया करते कि जब इनकी पत्नी मर गई तो सूतक लगने पर ये विरह के पद गा गा कर रोया करते थे । "और भाव तो गिरधर देखों।" "श्याम सुन्दर प्राण प्यारे धिन जिन होउ नियारे" ऐसे अनेक पद ये गा गाकर रोया करते।

जब श्री मथुरा जी श्रीनाथ जी पधारे तो इन्होंने विरह में ऐसा दिव्य पद गाया -

"श्री गोवर्धनवासी सांवरे लाल तुम बिन रहयौ न नाथ"

इस पद को सुनकर ठाकुरजी प्रगट हुए और आशीर्वाद दिया कि वर्ष पर्यन्त जो या पद को गाान करैगों तांकू मेरो अनुभव होइगो।

श्री गोवर्धन नाथ जी को गिरि पर लौटकर जब इन्होंने दर्शन पा लिया तभी जाकर चैन आया, ऐसा प्रेम ये श्री नाथ जी सों करते।

अन्तिम समय:- श्री निकुंज नायक एवं श्री गुसाई जी में इनका एकात्म भाव इनको विशिष्ट एवं विलक्षण बना देता है। जब श्री गुसाई जी गोवर्धन पर्वत की कंदरा में से लीला में पधारे तो चतुर्भुज दास ने आन्यौर में ये समाचार सुना तब ये दौड़ते हुए आए और सातों बालकों को विरह में देख ये मूर्छा खाय के गिर पड़े और रोते-रोते गाने लगे -

"फिर ब्रज वसहु श्री विठ्ठलेस।"

तब इनको हृदय में श्री गुसाई जी ने दर्शन दिया व आज्ञा की कि आप दु:ख मत करो मैं श्री नाथ जी के पास हूँ तब अब मुझे यहाँ मत रखो आपके बिना यहाँ किसको देखूँ। फिर श्री विठ्ठलनाथ जी कूं याद करिकें पद कियो-

"श्री विठ्ठलेस प्रभु भए न होइ हैं"

"पाछो सूने न आगे देखे यह छवि फेरि न बनिहै"

ऐसा गाकर श्री गुसांई जी के चरणों में ध्यान करि फागुन कृष्ण सप्तमी 1642 वि.स. को रूद्रकुण्ड पर इमली के वृक्ष के नीचे विरह में देह त्याग कर दिया। श्री चतुर्भुजदास जी भक्त न होकर भक्ति की परिभाषा ही बन गए ऐसे भगवदीय श्री चतुर्भुजदास जी के चरणों में बार-बार मेरा प्रणाम।।

★★★

श्री छीत स्वामी

(सप्तम सखा)

बसंत चतुर्वेदी

वन्दे गोवर्धनाधीशं श्रुत्युक्त रसरूपीणम्।
नमामी श्री मदाचार्यान् प्रभुश्री विट्ठलेश्वरान्॥

श्रीमद् वल्लभाचार्य प्रकटित पुष्टिमार्ग में सुविख्यात अष्टछाप के महानुभाव भक्त कवियों में से एक अप्रतिम भक्तकवि श्रीछीतस्वामी जी हैं। अष्टछाप के महानुभाव भक्त कवि ही श्रीगोवर्धन नाथ जी के अष्ट सखाओं के रूप में जाने जाते हैं।

श्री छीत स्वामी जी का जन्म श्री मथुरापुरी के माथुर चतुर्वेदीओं की विप्र परंपराओं में ई. सं. 1510 के लगभग मथुराके श्रीयमुना तट पर हुआ। प्रारंभिक शिक्षा दीक्षा भी श्री मथुरापुरी में ही की। अपनी युवावस्था तक आते आते श्री छीत स्वामी (छीतु चौबे) के नाम से विख्यात हो गए। इनकी संगति कुछ अच्छी नहीं थी। 252 वैष्णवों की वार्ता के अनुसार ये एक गुंडे के रूप में जाने जाते थे।

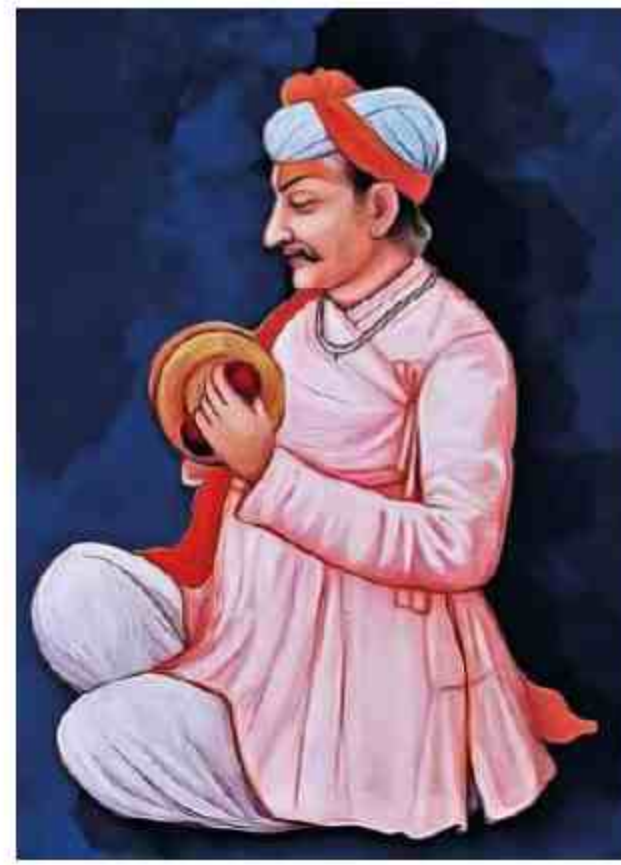

ऐसी ही इनकी संगति के कुछ लोग इनसे और जुड़ गये। पर इन सब में गुंडा गरदी में मुख्य (छीतु चौबे) ही थे। राह चलती स्त्रीयों से हंसी मजाक करना। इनका ये स्वभाव था। उसी काल में श्रीगोकुल में प्रभुचरण श्रीविट्ठलनाथ जी निवास कर रहे थे। इस समय उनका तेज प्रताप और ख्याति भक्ति मार्ग के एक श्रेष्ठ आचार्य के रूप में आसमान छू रही थी।

बड़े-बड़े महाराजे व धनीमानी लोगों के साथ- साथ निर्धन एवं अकिंचन् व्यक्ति भी बड़ी मात्रा में उनके शरणागत शिष्य थे तथा उनका दर्शन करने के लिए श्री मथुरा, श्री गोकुल व श्री गोवर्धन आते जाते रहते थे। श्री विट्ठलनाथ जी श्री गोसाई जी की इतनी ख्याति देख छीतु चौबे को लगा कि गोकुल के यह श्री

गुसांई जी कुछ ऐसा जादू टोना जानते हैं जिससे लोग इनसे प्रभावित होकर दान-मान आदि से इनकी खूब सेवा करते हैं तथा इन्हें भगवान् श्रीकृष्ण के जैसा ही मानते हैं।

छीतु चौबे को यह बात हजम नहीं हुई। एक दिन उन्होंने अपने साथी गुंडों के साथ विचार करके कहा कि भाई! गोकुल के गुसाई विट्ठलनाथजी अपने जादूटोने से लोगों को बहका रहे हैं। तो क्यों न चलकर कपट व्यवहार से इनकी परीक्षा ली जाए। यह सोचकर एक खोटा रूपया तथा एक थोथा (खोखला) नारीयल लेकर वे अपने साथियों के साथ श्री गुसांई जी की परीक्षा लेने के लिए श्रीगोकुल जा पहुँचे। श्री विट्ठलनाथजी गुसांई जी की हवेली के द्वार पर पहुंच कर उन्होंने अपने साथियों को द्वार पर ही रूक जाने को कहा और वे स्वयं कपट पूर्वक श्री विट्ठलनाथजी की परीक्षा लेने जा पहुँचे। जिस कक्ष में श्रीविट्ठलनाथजी विराजमान थे। ये उसके द्वार पर खड़े हुए। श्रीविट्ठलनाथ जी को देखते ही छीतु चौबे को उनका दर्शन साक्षात् नंदनंदन श्रीकृष्ण के रूप में हुआ।

ये ठगे से रह गए और स्वयं को धिक्कार ने लगे। इनके दोष श्री गुसांई जी के दर्शन करते ही मिट गए तथा इन्हें भगवान् के सखा रूप में अपनी दिव्यता का बोध हो गया। इन्हें द्वार पर खड़ा देखकर श्री गुसांई जी ने बड़े प्रेम से कहा कि- आओ छीतु चौबे... बड़े दिनन में आए। छीत स्वामी यह सुनकर आश्चर्य में पड़ गए। वे समझ गए कि श्रीविट्ठलनाथजी कोई सामान्य मनुष्य नहीं है, अपितु वे भगवान् (साक्षात्) श्रीकृष्ण ही है लज्जा से मस्तक झुकाकर वे गुसांई जी के पास चरणों में बैठ गए। तब श्री गुसांई जी ने कहाँ छीतु चौबे! शरमाओ मत। हमारे लिए जो भेंट लाए हों वह क्यों नहीं देते, अब भेंट में तो वे नारीयल खोटे लाए थे अत: ओर भी लज्जित होकर वे बोले कि प्रभो! मेरा कपट व छल तो आप सब जान ही गए हैं अत: मेरी इस दुष्टता को सार्वजनिक न करे और मुझे क्षमा करें। तब श्री गुसांई जी ने कहा छीतु चौबे! तुम भगवान श्रीकृष्ण की अंतरंग दिव्य ब्रज लीला के अलौकिक दैवी जीव हो। इसलिए तुम हमारे ही हो। तुम्हारी लाई गई वस्तु दुष्ट हो ही नहीं सकती इसलिए संकोच मत करो और जो लाए हो वो हमें दो और वह खोटा सिक्का व नारीयल दोनों ही खरे हो चुके थे। खोटा रुपया खरा हो चुका था। व खोटे नारीयल को फोड़ने पर उसमें से अत्यंत मधुरी गरी निकली।

जो प्रसाद के रूप में सबको वितरित की गई। श्री छीत स्वामी ने अपने साथ आए लोगों को वहाँ से भगा दिया और शुद्ध भाव से वे श्री विट्ठलनाथजी के वैष्णव शिष्य हो गए।

श्री वल्लभ संप्रदाय के छीत स्वामी का प्रवेश लगभग ई. स. 1535 में माना जाता है। श्रीविट्ठलनाथ जी के शिष्य होने के बाद श्री गुसांई जी की क्रिया से उनकी दिव्य शक्तियाँ जागृत हो उठी और उन्होंने अपना प्रथम यह पद इस प्रकार गाया।

भई अब गिरिधर सों पहचान
कपट रूप छरी छलवे आयो
पुरुषोत्तम नहीं जान
छीत स्वामी देखत अपनायो
श्री विट्ठल क्रिया निहान.....

इसके बाद छीत स्वामी श्रीगुसांई जी के चरणन को छोड़कर कभी कहीं न गए। यद्यपि वे चौबे (मथुरा के) थे। और बीरबल भी उनका यजमान था। बीरबल के तीर्थ पुरोहित होने के कारण उन्हें बीरबल से वार्षिक दक्षिणा मिलती थी, जिसे लेने वे अपनी वृति अनुसार जाते थे।

एक बार वे अपनी वार्षिक दक्षिणा के लिए बीरबल के यहाँ गये थे। प्रात: बेला में छीत स्वामी मंगलाचरण के रूप में अपने गुरुदेव श्री गुसांई जी की स्तुति का पद गा रहे थे।

जिसकी अंतिम तुक में उन्होंने गाया कि –

छीत स्वामी गिरिधन श्री विट्ठल तेही एही एही तेही कछु न संदेह.... ॥

अर्थात् श्रीविट्ठलनाथजी और भगवान् श्रीकृष्ण में कोई भेद नहीं है। यह सुनकर बीरबल ने उनसे कहा कि छीत स्वामी जी! देश का राजा मलेच्छ है, यदि सुनेगा तो श्रीविट्ठलनाथजी और श्रीभगवान् की अभिन्नता कैसे सिद्ध करोगे? छीत स्वामी क्रोध में भर गए और उन्होंने बीरबल से कहा कि बादशाह पूछेगा तो मैं उसे देख लूंगा लेकिन आचार्य श्री विट्ठलनाथजी में संदेह करने के कारण मेरे जान तुम्हीं सबसे बड़े मलेच्छ हो। जा आज के बाद तुम्हारा मुंह नहीं देखूंगा ये उसी समय वार्षिक दक्षिणा छोड़ चले दिये। यह बात श्रीविट्ठलनाथजी ने सुनी। तो उन्होंने छीत स्वामी से कहा यजमान पुरोहित को ऐसे बोल देते हो। तुमको इस प्रकार क्रोध में नहीं आना चाहिए। अब धन के बिना लोक व्यवहार कैसे करोगे?

छीत स्वामी जी ने कहा भगवान का सेवक होकर अब किसी से कुछ मांगूगा नहीं, भगवान जैसे रखेंगे वैसे रहूँगा। गुसांई जी की प्रेरणा से लाहौर के वैष्णवों का एक समूह छीत स्वामीजी की सेवा के लिए प्रतिवर्ष बीरबल से दोगुनी दक्षिणा भेजा करते थे।

उनके गुरु के प्रति अनन्यता की स्थिति यह है कि उनके रचित प्राय: सभी पदों में "छीत स्वामी गिरिधरन विट्ठल" इस प्रकार की छाप प्राप्त होती है। पुष्टि मार्ग की अष्ट सखा की भावना में छीत स्वामी "सुबल" सखा के अवतार माने गए हैं।

श्रीनाथजी की अष्टयाम सेवा में एकमात्र सामने कीर्तन करने का इनका ही अधिकार था।

श्रीगोवर्धन में पूंछरी के निकट अप्सरा कुंड पर इनका भगवल्लीला प्रवेश का स्थान है। भगवान की नित्यलीला में इनका प्रवेश ई. स. 1585 में बताया जाता है।

★★★

भक्त कवि नन्ददास

(अष्टम् सखा)

डॉ. नटवर नागर

अष्टछाप के कवियों में सूरदास के पश्चात नन्ददास का नाम अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ब्रज साहित्य के समीक्षक विद्वान भी वियोगीहरि का कथन है कि अष्टछाप के कवियों में सूरदास सूर्य हैं तो नन्ददास चन्द्र हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहासकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने नन्ददास के काव्य सौष्ठव पर अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है, "और कवि गड़िया नन्ददास जड़िया।"

नन्ददास का जीवन वृत्त भी अन्य भक्त कवियों के समान अनेक भ्रान्ति और विवादों से ग्रस्त है। नन्ददास का सर्वमान्य जीवन वृत्त अभी तक कोई भी प्रस्तुत नहीं कर सका है। इसलिए जब तक कोई सर्वमान्य प्रमाणिक जीवन वृत्त हमारे समक्ष नहीं आता तब तक पुष्टिमार्गीय वार्ता साहित्य के ग्रंथ 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता' और गोस्वामी तुलसी दास के जीवन वृत्त से सम्बन्धित सोरों सामग्री के अविनाश ब्रह्मभट्ट कृत ग्रंथ 'तुलसी प्रकाश' को ही हमें नन्ददास की जीवनी से सम्बन्धित बाह्यसाक्ष्य के रूप में मान्यता प्रदान करना उचित प्रतीत होता है।

उपर्युक्त दोनों बाह्यसाक्ष्य के आधार पर नन्ददास का जन्म उत्तर प्रदेश में 'कासगंज' शहर से 15 किलोमीटर दूर रामपुर नामक ग्राम में सन 1533 के लगभग हुआ था। आपके पिता का नाम जीवाराम था। जीवाराम के नन्ददास और चन्द्रहास दो पुत्र थे। जीवाराम के बड़े भाई का नाम आत्माराम था। आत्माराम के पुत्र का नाम तुलसीदास था जिन्होंने राम चरित मानस की रचना करके कालजयी ख्याति अर्जित की। इस प्रकार नन्ददास और तुलसीदास चचेरे भाई थे, गोस्वामी तुलसीदास आयु में नन्ददास से बड़े थे। बचपन में नन्ददास और गो. तुलसीदास दोनों ने सोरों में रह कर रामानन्द सम्प्रदाय के

विख्यात विद्वान नृसिंह पंडित (नरहरि) से संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की थी। इसी समय नन्ददास काव्य कला और संगीत कला में भी प्रवीण हो गये थे। नन्ददास और तुलसीदास एक दूसरे से बहुत स्नेह करते थे। आरम्भ में पौराणिक वृत्ति के लिए भी प्राय: दोनों साथ साथ ही प्रवास पर रहते थे।

एक दिन यात्रियों का एक दल द्वारिका जा रहा था, नन्ददास की इच्छा भी द्वारका जाने की हुई, तुलसीदास ने उन्हें रोकना चाहा किन्तु नन्ददास नहीं माने और यात्रियों के साथ द्वारका की यात्रा पर निकल दिये। यात्रियों का दल मार्ग में मथुरा में रुका किन्तु नन्ददास अकेले ही आगे बढ़ गये और मार्ग भूल कर 'सिंहनद' नामक एक गाँव में पहुँच गये। वहाँ रुक कर आप साथ के यात्रियों के आने की प्रतीक्षा करने लगे। इसी मध्य वहाँ नंददास एक सुन्दर खत्री महिला पर आसक्त हो गये और प्रतिदिन उस महिला के घर के चक्कर लगाने लगे। महिला के परिजनों ने नन्ददास से पीछा छुड़ाने के लिए बहुत प्रयत्न किये पर सफलता नहीं मिली, तब हार मान कर बदनामी के भय से महिला के परिजन उस महिला को लेकर मथुरा आ गये और गोकुल पहुँच कर गोस्वामी विट्ठलनाथजी से उन्होंने अपनी वेदना कही, विट्ठलनाथजी ने नन्ददास को बुलाकर बहुत समझाया तब नन्ददास का मोह दूर हुआ। यह बात सन 1550 के लगभग की है तभी नंददास ने विठ्ठलनाथजी से पुष्टिमार्गीय दीक्षा ग्रहण की और पुष्टिमार्ग के अनुयायी हो गये।

पुष्टिमार्ग में दीक्षित हो कर नन्ददास का जीवन-क्रम ही बदल गया। विट्ठलनाथजी के सत्संग और सूरदास आदि अष्टछाप के अन्य कवियों के सानिध्य से आपके हृदय में दैन्य भाव जागृत हुआ तथा मर्यादा भक्ति के स्थान पर पुष्टि भक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। आप गोवर्धन में मानसी गंगा पर स्थायी रूप से रहने लगे और श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में संलग्न हो गये। नन्ददास ने अपना शेष जीवन यहीं पर कीर्तन करने और ग्रंथ रचना में व्यतीत किया।

गोस्वामी विट्ठलनाथ जी ने सन 1545 में श्री नाथजी की कीर्तन सेवा के लिए आठ कवि एवं संगीतज्ञों की एक मंडली बनाई थी, इन आठ मनीषियों में कुम्भनदास, कृष्णदास, सूरदास, परमानन्ददास और विष्णुदास छीपा, पाँच वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे और गोविन्द स्वामी, छीत स्वामी तथा चतुर्भुजदास, तीन गोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। विट्ठलनाथ जी ने नन्ददास को सन् 1550 में पुष्टिमार्गीय दीक्षा लेने के पश्चात् अष्टछाप में सम्मिलित किया तब तक विष्णुदास छीपा अष्टछाप में रहे। विष्णुदास अति वृद्ध हो गये थे इसलिए गो. विठ्ठलनाथजी ने विष्णुदास को अपना द्वार रक्षक नियुक्त किया और नन्ददास को उनके स्थान पर अष्टछाप में नियुक्त किया। तब से अष्टछाप में कुम्भनदास, कृष्णदास, सूरदास और परमानन्ददास ये चार शिष्य वल्लभाचार्य जी के और नन्ददास, गोविन्दस्वमी, छीतस्वामी तथा चतुर्भुजदास ये चार शिष्य विट्ठलनाथजी के हुए। यह मंडली हिन्दी साहित्य में 'अष्टछाप' के नाम से प्रतिष्ठित हुई। पुष्टिमार्ग में इन आठ संगीतज्ञों को 'अष्टसखा' कहा जाता है।

सम्प्रदाय में ये 'अष्टसखा' परम आराध्य श्रीनाथजी की मूल लीला के क्रमश: अर्जुन, ऋषभ, कृष्ण, तोक, भोज, श्रीदामा, सुबल और विशाल इन आठ अंतरगी साखाओं के नाम से जाने जाते हैं।

सोरों सामग्री के अनुसार, बहुत समय हो जाने पर एक बार गोस्वामी तुलसीदास अपने प्रिय चचेरे छोटे भाई नन्ददास से मिलने के लिए शक संवत् 1493 (सन् 1571) माघ शुक्ल पंचमी, मंगलवार को मथुरा आये। एक किंवदन्ती के अनुसार मथुरा आकर तुलसीदास ने यमुना किनारे 'रामघाट' पर यमुना में स्नान किया और वहाँ स्थापित 'रामेश्वर महादेव' पर जल चढ़ाया और वहीं निकट ही, सामने की गली में एक मंदिर में दर्शन करने गये। वहाँ चतुर्भुजी श्रीकृष्ण के विग्रह को देख कर तुलसीदास ने कहा :

कहा कहौं छवि आपकी, भले बने हो नाथ।
तुलसी मस्तक तब नवे, धनुष बाण लेओ हाथ॥

कहते हैं तब वहाँ श्रीकृष्ण के विग्रह में तुलसीदास को श्रीराम के दर्शन हुए। उस स्थान को आज मथुरा में 'रामजी द्वारा' कहते हैं और वहाँ अभी भी श्रीराम का एक प्राचीन मन्दिर है, इस मंदिर में चतुर्भुजी श्रीकृष्ण और श्रीराम के विग्रह हैं।

मथुरा से गोस्वामी तुलसीदास गोवर्धन गये वहाँ वे नन्ददास से मिले, नन्ददास उन्हें देख कर बहुत प्रसन्न हुए उन्होंने तुलसीदास का अभिवादन किया। नन्ददास ने तुलसीदास को सूरदास, परमानन्ददास आदि अष्टछाप के कवियों से मिलवाया। तुलसीदास ने सूरदास, परमानन्ददास, नन्ददास आदि के मुख से कोमल कान्त पदावली युक्त ब्रजभाषा में लिखे हुए श्रीकृष्णलीला से सम्बन्धित पद सुने। तुलसी अष्टछाप के पदों से बहुत प्रभावित हुए। नन्ददास ने तुलसी को सम्पूर्ण श्रीकृष्ण चरित सुनाया और श्रीकृष्ण की लीलाओं के स्थलों का दर्शन भी कराया। तुलसीदास को लेकर नन्ददास अपने गोस्वामी विट्ठलनाथजी के पास, गोकुल भी गये। विठ्ठलनाथजी जानते थे कि तुलसी कट्टर राम भक्त हैं। विट्ठलनाथजी ने तुलसी को समझाया कि वे श्रीराम और श्रीकृष्ण में कोई अन्तर नहीं मानते हैं, उनके पाँचवें पुत्र का नाम 'रघुनाथजी' है और छटे पुत्र का नाम 'यदुनाथजी' है। विट्ठलनाथजी ने तुलसी को रघुनाथजी से मिलवाया तुलसी को रघुनाथजी और उनकी धर्मपत्नी में साक्षात् श्रीराम-सीता के दर्शन हुए, दर्शन कर तुलसीदास ने उन्हें प्रणाम किया और मंत्रमुग्ध हो गये।

नाट्य साहित्य के प्रख्यात विद्वान डॉ. दशरथ ओझा का मानना है कि कृष्णलीला नाटक लिखने की परम्परा नन्ददासजी ने स्थापित की, उन्होंने रासलीला का जो पथ बनाया उस पर अनेक महात्मा चलते रहे। उन्होंने लीलानाटक लिखने की प्रेरणा अन्य महात्माओं को भी प्रदान की।

नन्ददास ने तुलसीदास को भी अष्टछाप के पदों पर आधारित श्रीकृष्ण की 'रासलीला' का अवलोकन करवाया, नन्ददास द्वारा 'रासलीला' के लिए विरचित 'स्याम सगाई', 'गोवर्धन लीला', 'सुदामा चरित', 'दान लीला' आदि लीलाओं का भी तुलसीदास ने अवलोकन किया होगा। हमें लगता है, नन्ददास द्वारा अपने आराध्य श्रीकृष्ण की लीलाओं का 'लीलानाट्य' के माध्यम से प्रचार-प्रसार करना तुलसीदास को बहुत पसंद आया और 'रासलीला' से प्रेरित होकर ही तुलसीदास ने सन् 1580 में 'रामचरित मानस' के आधार पर काशी के गंगा तट पर सर्वप्रथम 'रामलीला' का शुभारम्भ किया।

तुलसीदास अष्टछाप की कोमलकान्त पदावली युक्त 'ब्रजभाषा' और 'पद शैली' से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने ब्रजभाषा को माध्यम बना कर अष्टछाप की पद शैली में श्रीकृष्ण गीतावली ग्रंथ लिखना, मथुरा में आरम्भ किया और काशी चले गये। तुलसी ने काशी पहुँच कर कार्तिक मास में श्रीकृष्ण की 'नाग नथैया लीला' आरम्भ की जो आज वाराणसी में लक्खी मेले का रूप ले चुकी है।

नन्ददास ने अष्टछाप के अन्य कवियों के समान स्फुट पदों की रचना तो की ही है और इन पदों का संग्रह 'पदावली' के नाम से हुआ भी है, इसके अतिरिक्त नन्ददास ने अन्य ग्रंथों की रचना भी की है उनके नाम हैं : 'अनेकार्थ मंजरी', 'मान मंजरी', 'रस मंजरी', 'रूप मंजरी', 'विरह मंजरी', 'प्रेम बारह खड़ी', 'स्याम सगाई', 'सुदामा चरित', 'रुक्मिणी मंगल', 'गोवर्धन लीला', 'भ्रमर गीत', 'रासपंचाध्यायी', 'सिद्धान्तपंचाध्यायी' और 'दशमस्कंध भाषा'।

लगभग सन् 1583 में मानसी गंगा, गोवर्धन (मथुरा) के निकट ही पीपल के एक वृक्ष के नीचे अपने पार्थिव शरीर का त्याग कर नन्ददास गोलोक धाम के लिए प्रस्थान कर गये। नन्ददास से प्रेरणा लेकर अनेक परिवर्तित भक्त कवियों ने साहित्य सृजन किया और लीला नाटकों को बल प्रदान किया।

★★★

चन्द्र प्रताप सिकरवार

गीता शोध संस्थान में हुए आयोजन

एक दृष्टि में

गीता जयंती : श्रीकृष्ण जन्मस्थान और गीता शोध संस्थान में व्याख्यान

गीता जयंती के उपलक्ष्य में उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने श्रीकृष्ण जन्म स्थान सेवा संस्थान के सह प्रायोजन से जन्म स्थान स्थित लीला मंच पर विगत 03 दिसंबर 2022 को श्रीमद् भगवद् गीता पर व्याख्यान कराए। ये व्याख्यान गीता मर्मज्ञ प. धीरेन्द्र शास्त्री ने दिए। इससे पूर्व मंच पर भगवान बालकृष्ण के चित्रपट पर सभी ने माल्यार्पण किया। श्रीकृष्ण जन्म स्थान सेवा संस्थान के सचिव कपिल शर्मा, सदस्य गोपेश्वर नाथ चतुर्वेदी, पर्यटन अधिकारी मथुरा डी के शर्मा, उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद के ब्रज संस्कृति विशेषज्ञ डा. उमेश चंद्र शर्मा, परिषद में कार्यरत आर पी यादव, अधिवक्ता मुकेश खंडेलवाल, श्रीकृष्ण जन्मस्थान के सुरक्षा अधिकारी विजय बहादुर, गीता शोध संस्थान के समन्वयक चंद्र प्रताप सिंह सिकरवार आदि ने दीप प्रज्वलन किया।

गीता जयंती के उपलक्ष्य में ही अगले दिन 04 दिसंबर 2022 को गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी वृन्दावन के सभागार में श्रीमद् भगवद् गीता पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। उपस्थित विद्वतजनों को गीता शोध संस्थान की ओर से यथार्थ गीता एवं संस्थान की मासिक पत्रिका 'ब्रज लोक संपदा' की प्रतियां भेंट की गयीं।

संगोष्ठी में 'गौरांग इंस्टिट्यूट ऑफ वैदिक एजुकेशन (गिव) के अध्यक्ष डॉ. वृंदावन चंद्र दास ने कहा कि भगवद् गीता का ज्ञान भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिया था। यही ज्ञान मानव जाति को बचाने की एक हिंदू पद्धति है। गीता मनीषी डा. अशोक विश्वमित्र ने कहा कि गीता हमें कर्तव्य पथ पर चलने का ज्ञान देती है। हमारी मति कर्म में लगे, यही संदेश गीता का है। अखंडानंद सरस्वती

पुस्तकालय के प्रभारी सेवानंद ब्रह्मचारी जी ने कहा कि श्रीकृष्ण के हृदय से ये गीता प्रकट हुई थी। यह गीता प्रश्नोत्तर के माध्यम से बुद्धि की गुत्थी को सुलझाती है।

संत कृष्णानंद महाराज ने कहा कि मोक्षदा एकादशी पर अर्जुन जैसे मित्र को भगवान श्रीकृष्ण ने गीता का अमृत पान कराया था। गीता का महत्व उपनिषद और वेदों से भी कहीं ज्यादा है। भागवत वक्ता आचार्य ब्रदीश ने कहा कि बगैर भक्ति के ज्ञान अधूरा है। गीता स्वयं भगवान श्रीकृष्ण की भावना को दर्शाती है। यह योग शास्त्र के साथ ही जीव और ईश्वर का एक सशक्त संवाद है। संत श्रीकांत श्रीजी ने गीता के कर्म योग पर व्याख्यान दिया।

ब्रजभाषा के कवि अशोक अज्ञ एवं हरिबाबू ओम ने कविता के माध्यम से गीता के विभिन्न अध्यायों को समझाया।

ब्रज संस्कृति विशेषज्ञ डॉ. उमेश चंद्र शर्मा ने गीता के संदेश को आंचलिक भाषाओं में जन-जन तक पहुंचाने का आह्वान किया। अध्यक्षता वृन्दावन शोध संस्थान के निदेशक डॉ. एसपी सिंह ने की। क्रांतिकारी स्वामी सत्यमित्र, साहित्यकार चंद्रप्रकाश, गोपाल गोप, कवियत्री सुमन पाठक ने भी गीता पर अपने विचार व्यक्त किये। संचालन केआर कॉलेज के असिस्टेंट प्रो. डॉ. रामदत्त मिश्र ने किया। गीता शोध संस्थान के समन्वयक चंद्र प्रताप सिंह सिकरवार ने मंचासीन अतिथियों का पटुका उड़ा कर सम्मान किया। इस अवसर पर साहित्यकार कपिल देव उपाध्याय, ब्रज शोध संस्थान वृंदावन के सचिव लक्ष्मी नारायण तिवारी, प्रकाशन अधिकारी गोपाल शरण शर्मा, उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद में कार्यरत इंजीनियर आरपी यादव और दूधनाथ सिंह, स्वामी घनश्याम रासाचार्य, डॉ उमाशंकर श्रीवास्तव, प्राचार्य डॉ देव प्रकाश शर्मा, समन्वयक गीता शोध संस्थान डा. रश्मि वर्मा, डाटा आपरेटर दीपक शर्मा, ओम भारद्वाज रासाचार्य, साहित्यकार चंद्रप्रकाश शर्मा आदि गीता संगोष्ठी में उपस्थित रहे।

ब्रज की लोक कलाः कल आज और कल

(कविवर स्व. छैल बिहारी उपाध्याय स्मृति में आयोजन)

गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी वृंदावन में 19 दिसंबर को 'ब्रज की लोक कला: कल आज और कल' विषय पर परिचर्चा व संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

कविवर स्व. छैल बिहारी उपाध्याय की स्मृति में आयोजित संगोष्ठी में ब्रज के लोकगायन व लोक विधाओं के संरक्षण और संबर्धन पर गहन मंथन हुआ। कलाकारों ने गायन, मंचन व वेशभूषा की परंपरा में नयापन लाने व उसे सुधारने का संकल्प लिया।

ब्रज संस्कृति विशेषज्ञ डॉ. उमेश चंद्र शर्मा ने कहा कि ब्रज की लोक कलाओं को बचाने और उनके संरक्षण के गंभीर प्रयास होने चाहिए। आज कला के साथ न्याय हो। कलाकार की मंचन प्रस्तुति में नयापन हो। ऐसा तभी होगा जब कलाकार मंच पर पूरी तैयारी के साथ पहुंचे। इससे आने वाले समय में ब्रज की मंचीय कलाओं को बचाया जा सकेगा।

ब्रज साहित्य मर्मज्ञ कपिल देव उपाध्याय ने कहा कि वृंदावन शुरू से ही रासलीला का केंद्र रहा है लेकिन अब यह परंपरा बहुत कम रह गई है। गीता शोध संस्थान वृंदावन की रासलीला को बचाने में अहम भूमिका निभाए। आज सपेरों के बीन, चित्रकला आदि कई तरह की विधाएं खत्म हो रही हैं। इन्हे बचाने की जरूरत है।

संगोष्ठी की अध्यक्षता ब्रज निधि प्रेमी जी महाराज ने की। उन्होंने कहा कि अभिभावक अपने बच्चों को ब्रजभाषा सिखाएं। बच्चे–बच्चियां ब्रज के लोकगीत सीखें। दुर्भाग्य है कि ब्रज भाषा सिखाने वाला कोई भी शिक्षण संस्थान आगे नहीं आ रहा।

संगोष्ठी के समन्वयक अरुण रावल ने– 'आसरा जहां का मिले या न मिले' गीत प्रस्तुत किया। गायक ओम प्रकाश डागुर ने कहा कि ढोला व आल्हा आज बचाने की जरूरत है। भारती शर्मा ने कलाकार द्वारा तैयारी के साथ मंच पर जाने की जरूरत पर बल दिया।

सुप्रसिद्ध कलाकार डॉ सीमा मोरवाल ने कहा कि कला वही है जो समय के साथ प्रखर होती जाए। लोक कला बचाने को आज ब्रज के गीतों का संरक्षण आवश्यक है। कार्यक्रम में कलाकार होतीलाल ने नौटंकी शैली में गायन प्रस्तुत किया। अमर सिंह ने भजन, पूनम और पूजा ने रसिया सुनाएं।

उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद के पर्यावरण विशेषज्ञ मुकेश शर्मा समेत कई वक्ताओं ने ब्रज की लोककला पर व्याख्यान दिए। संचालन उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद के ब्रज संस्कृति विशेषज्ञ डॉ. उमेश चंद्र शर्मा ने किया। माल्यार्पण कर मंचस्थ अतिथियों का अभिनंदन व अतिथि परिचय 'गीता शोध संस्थान' के समन्वयक चंद्र प्रताप सिंह सिकरवार ने किया। दीपक शर्मा ने व्यवस्थाएं संभालीं।

★★★

NK Group

www.nkgroup.net.in

Rera Registration No.: UPRERAPRJ9769

वृन्दापुरम

उ.प्र. सरकार की अफोर्डेबल आवास नीति के अन्तर्गत

(एक सम्पूर्ण आवासीय योजना)

MVDA APPROVED

LOAN FACILITY AVAILABLE

State Bank of India

ICICI Bank

उच्च गुणवत्तायुक्त मकान प्राप्त करने का सुअवसर

निकट जी.एल.ए. विश्वविद्यालय, एनएच–2, वृन्दावन (मथुरा)

License No. 4019/25.C/SAY/2015-16 Date 01/05/2015

राज्य सरकार अनुमोदन संख्या 307/आ.ब.–1/स.यो.–पंजीकरण/2016 लखनऊ

मानचित्र अनुमोदन २ ख्या 08/के/16–17/म.वृ.वि.प्रा./2016–17

मो.: +91-7599995000, 9837128001, 759995000

मथुरा डॉक पंजीयन संख्या-070/2022-24 पंजीयन संख्या UPHIN 2003/11917

उत्तर प्रदेश ब्रज तीर्थ विकास परिषद

upbtvp

सांस्कृतिक धरोहर की पुनर्प्रतिष्ठा

UP Braj Teerth Vikas Parishad has been constituted under the Uttar Pradesh Braj Niyojan Aur Vikas Board (sanshodhan) Adhiniyam 2017 (U.P. Act No. 3 of 2017) for the preparation of a plan for preserving, developing and maintaining the aesthetic quality of Braj heritage in all hues - cultural, ecological and architectural, co-coordinating and monitoring the implementation of such plan and for evolving harmonized policies for integrated tourism development and Heritage conservation and management in the region, giving advice and guidance to any department/local body/authority in the district of Mathura in respect of any plan, project or development proposals which affects or is likely to affect the heritage resource of the Braj Region and for matters connected here with or incidental there to.